Chap-2

द्वितीय अध्याय

हिन्दी–एकांकी

* एकांकी की परिभाषा
* एकांकी का स्वरूप
* एकांकी का आरंभ और विकास

हिन्दी एकांकी, आधुनिक युग की विकासोन्मुख एवं लोकप्रिय साहित्यिक विधा है। मनुष्य की रागात्मक चेतना की अभिव्यक्ति में पाषाणयुग से नए-नए आयाम की खोज होती रही। परिणामस्वरुप कालांतर में संसार की विभिन्न भाषाएँ अस्तित्व में आयीं। लेकिन भाषा माध्यम का भी जब मनुष्य को अपनी भावप्रवणता और रागात्मकता की अभिव्यक्ति में अपूर्ण अर्थात् अक्षम प्रतीत हुआ तो इसकी पूर्णता के लिए उसने सहज-स्वाभाविक ढंग से हाव-भाव, मुद्राओं, संकेतों आदि का सहारा लिया। जे. डब्ल्यू. मेरियट इस अवधारणा के प्रबल समर्थक रहे हैं।'[1]मानव की इसी सहज-स्वाभाविक प्रवृत्ति ने आदिम युग में नाटक को जन्म दिया था।

हिन्दी साहित्य के प्रारंभ से हजारों वर्ष पूर्व भारतीय संस्कृत साहित्य में नाटक की एक दीर्घकालीन समृद्ध परंपरा विद्यमान थी। प्रो. हिलब्रैंड, डॉ. कीथ, डॉ. ओझा, प्रो. ललिताप्रसाद शुक्ल आदि विद्वानो ने संस्कृत की समृद्ध नाट्य परंपरा से भी पूर्व वैदिककालीन साहित्य में तथा भरतमूनि के नाट्यशास्त्र के रुपक-उपरुपक के विभिन्न भेदों में एकांकी का प्रारुप प्रस्तुत किया है। फिर भी यह निर्विवाद रुप से स्वीकार किया गया है कि हिन्दी एकांकियों का आधुनिक रुप अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से प्रेरित एवं प्रतिफलित है। एकांकी को प्रारंभ में हिन्दी नाटक का लघु रुप अर्थात् प्रारुप, मानकर उसके साहित्यिक स्वरुप पर विचार-विमर्श होता था। लेकिन शनैः शनै अपने पृथक स्वरुप, शिल्प-विधान, एवं प्रभावगत विशेषताओं के कारण एकांकी आधुनिक युग की एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रुप में महत्ता प्राप्त किए हुए है।

हिन्दी एकांकी के प्रारंभ को प्राचीन बतलाने की धून में हम चाहे अतीत में कितनी ही दूर क्यों न चले जायें लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि किन्हीं अज्ञात कारणों से संस्कृत की सुदृढ नाट्य-परंपरा हिन्दी नाट्य-परंपरा के रुप मे अक्षुण्ण रुप से विकसित नहीं हो पायी थी। 19वी शताब्दी के पश्चात् ही हिन्दी नाटक को जीवनदान मिला है। पश्चिमी साहित्य में One Act Play के शिल्प-विधान के प्रभाव का हिन्दी एकांकी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 'एकांकी' नाम अमेरिका के पर्सिवल वाइल्ड आदि आलोचकों के द्वारा प्रचलित हुआ और अंग्रेजी के माध्यम से हिन्दी में भी अपनाया गया। हिन्दी में, पाश्चात्य शिल्प-विधान के प्रभाव को ग्रहण करते हुए लगभग भारतेन्दु काल से हिन्दी-एकांकी का अस्तित्व एवं महत्व विकसित हुआ। वास्तव में, इसकी साहित्यिक परपरा है, इसकी उपलब्धि प्रदान करने वाले तथ्य भी विशुद्ध रुप से इसके अपने हैं, इसकी स्वयं की शक्तियॉ है यह स्वजातीय है इसके सारे संस्कार भी इसी के हैं अर्थात् निजी हैं, सारे स्वर इसके हैं। आविर्भाव-काल से ही हिन्दी एकांकी पर सबसे बडा प्रभाव पड़ा कि

इसका स्वरुप नितांत मौलिक और स्वर नितान्त यथार्थवादी रहा।

आज के एकांकी नाटकों का विश्लेषण करके हम कह सकते हैं कि जो नाटक एक अंक में समाप्त होने वाला, एक सुनिश्चित लक्ष्यवाला, एक ही घटना, एक ही परिस्थिति और एक ही समस्यावाला हो, और जिसके प्रवेश में कौतूहल और वेग, गति में विद्युत-सी वक्रता और तेजी, विकास मे एकाग्रता और आकस्मिकता के साथ चरम सीमा तक पहुँचने की व्यग्रता हो और जिसका पर्यवसान चरमसीमा पर ही प्रभाव की तीव्रता के साथ हो जाता हो, जिसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः निषेध, घटनाओं की विविधता का निवारण तथा चारित्रिक प्रस्फुटन में आदि, मध्य और अवसान का वर्जन हो, उसे एकांकी कहना चाहिए।'[2] हिन्दी साहित्य में एकांकी सबसे शक्तिशाली माध्यम है।[3] थोड़े-से समय में ही इसने साहित्य मे अनिवार्य स्थान बना लिया है। इस व्यस्त जीवन में कम-से-कम समय में अधिकाधिक मनोरंजन करने में यह सफल हुआ और साथ ही जीवन की बहुमुखी समस्याओं का दिग्दर्शन तथा उनका समाधान प्रस्तुति बडी ही कुशलता से करता है। घटनाओं तथा पात्रों के अन्तर्व्यापी नैकट्य को दूर कर जीवन की पृष्ठभूमि पर प्रत्येक घटना और समस्या का स्वाभाविक उभार प्रस्तुत करना एकांकी का ही कौशल है। इस प्रकार कम समय में अधिकाधिक मनोरंजन, पात्रों की दिल को छू जानेवाली क्रियाएँ और घटनाएँ, आकर्षक मंचन, जीवन से जुड़ी सत्यता एकांकी में ही है।

हिन्दी एकांकी के स्वरुप प्रतिपादन में विद्वानों एवं आलोचकों ने अपनी-अपनी रुचियों के अनुसार परिभाषाएँ निर्धारित करने तथा तत्वविवेचन के प्रयत्न किये हैं। परिभाषाओं के अध्ययन से हिन्दी एकांकी के तात्विक स्वरुप का परिचय प्राप्त करने का यथाशक्ति यत्न किया गया है। अनेक एकांकीकार आलोचक और कलाकार दोनों ही हैं। उन्होंने स्वयं एकांकी की टैकनीक पर पर्याप्त विचार और प्रयोग किए हैं एकांकी के सम्बन्ध में अद्यावधि विद्वानों के जो मत प्राप्त हुए हैं वे इस प्रकार हैं-

परिभाषा :

एकांकी का सम्बंध रंगमंच से जोड़ते हुए यह कहा गया है कि एकांकी अभिनेताओं द्वारा दर्शको के सम्मुख रंगमंच पर प्रदर्शित की जाती है। एकांकी के सम्बंध में कहा गया है कि – एकांकी वह नाटक है जो एक अंक में ही पूर्णता प्राप्त करता है। लोक-गान के आलोक में एकांकी वह दृश्य काव्य है जो एक अंक में अपने सम्पूर्ण घटनाक्रम की समग्रता को अन्तर्निहित कर मेघ-मालाओं की तरह सघन हो, भावुक के हृदय-मंच पर बरस पडे, और उन्हें रससिक्त कर दे।[4]

आधुनिक हिन्दी नाटको की टैकनीक, पर्याप्त समुन्नत हो चुकी है। एकांकी की पहचान नाटक के लघुरुप में करने का यत्न यद्यपि जारी है किन्तु आधुनिक एकांकी अपनी कला में पूर्ण तथा स्वकेन्द्रित है। यह अपने आप मे पूर्ण तथा स्वतंत्र सत्ता रखनेवाला है। अतः एकांकीकारों, कलाकारों एवं आलोचकों के समक्ष एकांकी गहन विषय था। इसलिए एकांकी-विषय पर विचार-विमर्श करते हुए उन्होंने अपने-अपने मत व्यक्त किए। प्रो. सदगुरुशरण अवस्थीजी ने एकांकी के आकार-प्रकार को ध्यान में रखते हुए परिभाषा दी है। डॉ. रामकुमार वर्माजी ने टैकनीक के आधार पर, सेठ गोविन्ददास जी ने संविधान के आधार पर तथा श्री 'अश्क' ने रंगमंच को ध्यान में रखते हुए एकांकी की परिभाषा प्रस्तुत की है।

सदगुरुशरण अवस्थी जी ने एकांकी को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, "एकांकी नाटक का सुनिश्चित और सुकल्पित एक लक्ष्य होता है। उसमें केवल एक ही घटना, परिस्थिति अथवा समस्या प्रबल होती है। कार्य कारण की घटनाएँ अथवा कोई गौण परिस्थिति अथवा समस्या का उसमें कोई स्थान नही होता। एकांकी नाटक के वेग-सम्पन्न प्रवाह में किसी प्रकार के अन्तर प्रवाह के लिए अवकाश नहीं होता। कथावस्तु, परिस्थिति, व्यक्तित्व इन सबके निर्देश में मितव्यता और चातुरी का जो रुप अच्छे एकांकी नाटकों में मिलता है वह साहित्य कला की अद्वितीय निधि है।"[5] अवस्थी जी की परिभाषा तथा तत्वों में लक्ष्य की एकता को अनिवार्य माना गया है।[6] अवस्थी जी की एकांकी को निजी सत्ता रखने वाला साहित्य का एक अंग, उसकी अपनी निजी आत्मा और स्पष्टीकरण की निजी शैली मानते हैं।[7] उसकी सार्थकता साहित्य के स्थायीत्व पर अधिक और अभिनय अनुकूलता पर उतनी नहीं है। उनकी दृष्टि में एकांकी साहित्य की सबसे बडी विशेषता ऊँची चिंतना का प्रवेश है।[8] उन्होंने अभिनयशीलता को गौण स्थान प्रदान कर ऊँची चिंतना और साहित्यिकता पर विशेष बल दिया है। अवस्थी जी अपने एकांकियों में ऊँची चिंतना, दार्शनिकता और गंभीर तर्क-वितर्क को प्रधानता देते हैं। आकार-प्रकार की बाह्य-दृष्टि से एकांकी होते हुए भी इनके एकांकी दार्शनिक चिन्तना के भार से दबे हैं। आपने अपनी परिभाषा में पात्रों के आंतरिक संघर्ष, कथानक की कुतूहलता और एक प्रभावशीलता और मनोरंजकता आदि तत्वों का उल्लेख नहीं किया है। वस्तुतः उनकी परिभाषा एकांगी और अपूर्ण है।[9]

विषय की दृष्टि से सेठ गोविन्ददासजी का मत अवस्थी जी से मिलता-जुलता है। सेठजी एकांकी में सर्वप्रथम किसी एक मूल विचार की आवश्यकता मानते हैं। विचार से तात्पर्य जीवन की कोई समस्या है। इसके पश्चात् विचार के विकास के लिए संघर्ष अनिवार्य है, जो बाह्य तथा आंतरिक हो सकता है। सेठ जी

की दृष्टि में वह नाटक श्रेष्ठ है जिसमें जितना महान् विचार होगा, जितना तीव्र संघर्ष होगा, जितना संगठित एवं मनोरंजक कथा होगी, जितना विशद् चरित्र-चित्रण होगा और जितनी स्वाभाविक कृति एवं कथोपकथन होंगे। सारे नाटक पर एकता का वायुमण्डल होना चाहिए।[10] अवस्थीजी ने जिस तत्व को 'ऊँची चिंतना' माना है, सेठ जी ने उसी को विचार माना है। सेठजी ने आंतरिक संघर्ष पर जोर दिया है और कथानक के संगठन के अतिरिक्त मनोरंजकता और चरित्र-चित्रण की विशद्ता का भी समावेश किया है। जहाँ अवस्थीजी ने कथोपकथन में गंभीरता और दार्शनिक तर्क को प्रधानता दी है, सेठ जी स्वाभाविकता के पक्षपाती है। आप एकांकी की लेखन-पद्धति में संकलनत्रय को अनिवार्य समझते हैं। इनकी दृष्टि में एकांकी बडे और छोटे दोनों प्रकार के हो सकते हैं। अनेक दृश्यों के भी हो सकते हैं। स्थल संकलन जरुरी नहीं, पर काल संकलन होना चाहिए। अपनी परिभाषा के अन्तर्गत संविधान पर सेठजी ने विशेष बल दिया है। संकलनत्रय के महत्व तथा उनमें भी एक ही समय की घटना तथा एक ही कृत्य की अनिवार्यता, वे मानते हैं।[11] काल-संकलन की उपेक्षा के लिए उन्होंने उपक्रम और उपसंहार को जन्म दिया है। उन्होंने अपनी परिभाषा में एकांकी के केवल मुख्य अंगों, एक ही समय की घटना, एक पहलू का चित्रण तथा पात्रों की परिमित संख्या पर ही जोर दिया है। इस परिभाषा में त्रुटि यह है कि सेठजी ने नाटकों में आने वाले संघर्षो का रुप स्पष्ट नहीं किया है।[12]

डॉ. रामकुमार वर्मा ने जो एकांकी की परिभाषा दी है उसकी विशेषता यह है कि इसमें भाव अथवा विचार पक्ष तथा कलापक्ष दोनों ही पर सविस्तार विचार है। उनके मतानुसार "एकांकी में एक ही घटना होती है और वह नाटकीय कौशल से ही कौतूहल का संचय करते हुए चरमसीमा तक पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता... विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भाँति खिलकर पुष्प की भाँति विकसित होती है। उसमें लता के समान फैलने की उच्छृंखलता नहीं।[13] "हमारे जीवन के चारों ओर घटनाओं का अविराम प्रवाह बहता रहता है, जिनमें प्राणों के तत्व का अत्यंत रहस्यमय संकेत रहता है। इन घटनाओं को सजीव दृष्टि से देखकर उनकी व्यंजना में कथावस्तु का निर्माण कर लिया जाये। कला चातुर्य इसमें है कि घटनाओं को अधिक से अधिक घनीभूत कर उन्हें कार्यकारण की मनोरंजक श्रृंखला में कस लिया जावे।"[14] नाटक का प्राण उसके संघर्ष में पोषित होता है। यह संघर्ष जितना अधिक नाटककार की विवेचन शक्ति में होगा, उतना ही जिज्ञासा-मय उसका नाटक होगा।[15] एकांकी के कथानक का रुप हमारे सामने तब आता है, जब आधी से अधिक घटना बीत चुकी होती है.... उसके प्रारभिक वाक्य में ही कौतूहल और जिज्ञासा की अपरिमित शक्ति भरी रहती है.... कथानक क्षिप्रगति से आगे बढ़ता है और एक-एक भावना घटना को घनीभूत घटनावरोह में चरमसीमा विद्युतकी भाँति गतिशील होकर आलोक उत्पन्न करती

है और नाटककार समस्त वेग से बादल की भाँति गर्जन करता हुआ नीचे आता है। प्रवेश कुतूहल की वक्रगति से होता है। घटनाओं की व्यंजना उत्सुकता से लम्बी हो जाती है। फिर घटना में गति की घनीभूत तरंगे आती हैं। जो कुतूहलता से खिंचकर चरमसीमा में परिणति होती है। यहीं एकांकी की समाप्ति हो जानी चाहिए।[16] उन्होंने एक आदर्श एकांकी की रुपरेखा उदाहरण सहित 'रेशमीटाई' की भूमिका में स्पष्ट कर दी है।

एकांकी के आधाररुप से एक ही मुख्य घटना या जीवन की एक प्रमुख संवेदना होनी चाहिए जिसका विकास कौतूहल और जिज्ञासापूर्ण नाटकीय शैली में होना चाहिए। चरमसीमा पर पहुँचकर एकांकी का अंत होना चाहिए। एकांकी में अभिव्यक्ति घटनाओं का चुनाव दैनिक जीवन से हो तथा उसमें यथार्थवाद एवं मनोरंजन के तत्वों का उचित समावेश होना चाहिए। दो विरोधी पात्रों के वर्गो या मनुष्यों के दो प्रकार के भावों में संघर्ष होने से नाटक का ताना-बाना बनता है। संघर्ष एकांकी का प्राण है। एकांकी के कथानक मे कौतूहल तथा जिज्ञासा और चरमसीमा में परिणति होनी चाहिए। यथार्थवाद की रक्षा के लिए सहज स्वाभाविक चित्रण रहे। एकांकी की स्वाभाविकता और जीवन से निकटता बनाए रखने के लिए संकलनत्रय का कठोरता से पालन होना चाहिए। आकार छोटा रहे और अवधि कम लगे। उसमें पात्रों का चरित्र अथवा घटना को संक्षेप में प्रकट कर देने की क्षमता होनी चाहिए।

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने एकांकी का पहला तत्व उसका छोटा कैनवस माना है।[17] वे दृश्यों में अनेकता मानते हुए भी उन एकांकियों को महत्व देते हैं जिनमें एक अंक और एक ही दृश्य होता है।[18] लेकिन एक दृश्य अथवा एक अंक के विस्तृत एकांकी को वे बडे नाटक की कोटि में रखते है। आपकी परिभाषा में महत्व की बात अवधि है। आधुनिक एकांकी आधे घण्टे से लेकर पैंतालीस मिनट तक समाप्त हो जाना चाहिए, चाहे उसमें दृश्य एक हो अथवा तीन। 'अश्क' जी ने रंग-संकेत, कार्य-गति, अभिनय, सम्वाद, वातावरण, चरित्र-चित्रण, प्रकाश अथवा छाया का उचित प्रयोग आवश्यक तत्व माने हैं।[19] उनकी दृष्टि में एकांकी का सबसे बडा गुण संकलनत्रय का गुंफन है। सफल एकांकी रंगमंच पर उतने ही समय में अभिनीत होना चाहिए, जितने में कि वह वास्तविक जीवन में घट सकता है।[20] इस संबंध में रामकुमार वर्मा जी का कहना है कि "एकांकी का यही कौशल है कि बिना विस्तार बढाए और बिना स्थानों के बदले कौतूहल का संचय कर मन में क्रांति उत्पन्न कर दे। वह क्रांति चाहे यथार्थ में हो या आदर्श में हो, चाहे घटना में। यदि एकांकी अनेक दृश्यों में बँट जाये और दिनों या महीनों की अवधि पा ले तो उसमें प्राचीन एकांकी के अंक और रुपक में अन्तर ही क्या रहा। चरित्र और घटनाओं का दिग्दर्शन एक ही दृष्टि में कर सकने की क्षमता

आधुनिक एकांकी में है।"[21]

डॉ. नगेन्द्र की दृष्टि में एकांकी में एक अंक विस्तार की सीमा कहानी जैसी, जीवन का एक पहलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति अथवा उद्दीप्त क्षण, एकता, एकाग्रता और आकस्मिकता की अनिवार्यता, संकलनत्रय का साधारणतः पालन, प्रभाव और वस्तु का एक्य होना चाहिए। स्थान और काल की अनिवार्यता वे नहीं मानते।"[22] प्रो अमरनाथ गुप्त ने एकांकी की समाप्ति एक ही बैठक में अनिवार्य मानी है। एकांकी एक ही बार और एक ही समय में समाप्त होनेवाली लघु कृति है। उन्होंने बिजली की रफ्तार सी उसकी गति, एक ही विषय या घटना, संकुचित क्षेत्र पर प्रभाव साम्य, कथानक की सरलता, विषय और समय की मितव्यता आदि तत्व आवश्यक माने हैं। साधारण घटनाएँ भी आ सकती हैं किन्तु वे मुख्य घटनाओं से पृथक न पड़े। गुप्तजी ने भूल सुधार करते हुए लिखा कि एकांकी में सहायक घटनाएँ नहीं होनी चाहिए।[23]

डॉ. एस.पी. खत्री ने एकांकी के संबंध में कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी है। डॉ. खत्री ने एकांकी में संक्षिप्तता, समय की कमी और परिधि संकोच की ओर ध्यान आकृष्ट किया है।[24] डॉ. दशरथ ओझा का मत है कि सफल एकांकी वही माना जाएगा जो अल्प से अल्प-काल में रम्य से रम्य रुप में वर्तमान समस्याओं को व्यक्त कर दे।[25] ओझाजी ने आधुनिक एकांकी की परिभाषा इस प्रकार दी है- "जो नाटक एक अंक में समाप्त होनेवाला, एक सुनिश्चित लक्ष्य वाला, एक ही घटना, एक ही परिस्थिति और एक ही समस्यावाला हो, जिसके कथानक में कौतूहल और वेग, गति में विद्युत-सी वक्रता और तेजी, विकास में एकाग्रता और आकस्मिकता के साथ चरमसीमा तक पहुँचाने की व्यग्रता हो और जिसका पर्यवसान चरमसीमा पर ही प्रभाव की तीव्रता के साथ हो जाता हो, जिसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः निषेध, घटनाओं की विविधता का निवारण तथा चारित्रिक प्रस्फुटन में आदि, मध्य और अवसान का वर्जन हो, उसे एकांकी कहना चाहिए।[26]

डॉ. सिद्धनाथ कुमार की एकांकी के सम्बंध में परिभाषा दृष्टव्य है- "एकांकी एक या अनेक दृश्योंवाला वह संक्षिप्त नाट्य रुप है जो जीवन के किसी एक प्रसंग को अपना विषय बनाकर अपनी सघनता और अन्विति से दर्शकों में पॉच मिनट से लेकर एक घण्टे की अभिनय अवधि में ही अपेक्षित संवेग जगा पाता है।"[27] डॉ. सत्येन्द्र जी ने एकांकी का लक्षण बताते हुए लिखा है कि "एकांकी नाटक में साधारण नाटक से भिन्नता होती है उसके कथानक का रुप तब हमारे सामने आता है, जब आधी से अधिक घटना बीत चुकी

होती है। कथानक क्षिप्रगति से आगे बढ़ता है और एक भावना को घनीभूत करते हुए गूढ़ कौतूहल के साथ चरमसीमा में चमक उठता है।" डॉ. रामकुमार वर्मा ने इस विचार को और भी स्पष्ट किया है - "एकांकी नाटकों सी विशेषता होती है। उसमें एक घटना होती है और वह घटना नाटकीय कौशल से कौतूहल का संचय करती हुई चरमसीमा तक पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं होता।"

श्री जशवंत शेखड़ीवाला जी ने भी एकांकी को एक अंक के नाटक के रुप में मान्यता देते हुए कहते है कि– "एकांकी अर्थात् एक अंक का नाटक में जिज्ञासा प्रेरक प्रारंभ, विकास तथा अंतिम लक्ष्य की ओर गतिशील कथानक, एक प्रमुख घटना, रस की अभिव्यक्ति करत हुआ सुश्लिष्ट वस्तु-संयोजन, आन्तर बाह्य संघर्ष, जीवन, पात्र-सृष्टि, वैविध्यपूर्ण तथा प्रभावोत्पादक संवाद, स्थल-काल का एक्य, जीवन्त वातावरण, आकस्मिक चमत्कृतिपूर्ण अंत, भाव की पराकाष्ठा तथा अभिनय दृश्य आदि का संविस्तार रंगनिर्देश होता है।"[28] एकांकी मानव जीवन या समाज के एक पहलू या उद्दीप्त क्षण का चित्र है। इसका निर्माण एक आधारभूत मुख्य विचार, विशेष समस्या, एक सुनिश्चित सुकल्पित लक्ष्य एक ही महत्वपूर्ण घटना या परिस्थिति पर हो सकता है। विषय या परिस्थिति से प्रारंभ हो उसी में फैलकर एक प्रभाव डालता हुआ अपना पूरा विकास पाता है।[29] हिन्दी साहित्य कोश से - एकांकी नाटक साहित्य का वह नाट्य-प्रधान रुप है जिसके माध्यम से मानव-जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक पार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि ये एक अविकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते हैं।"[30] सिडनी बाक्स के शब्दों में "यदि यह पूछा जाए कि एकांकी नाटक की कौन-सी विशेषतायें हैं तो इसका उत्तर हो सकता है कि इसकी विषय-वस्तु एक ही होनी चाहिये, एक ही प्रभाव को इसे लक्ष्य बनाना चाहिये। इसमें एक ही स्थिति होनी चाहिए और इसे एक ही चरित्र या सामूहिक चरित्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिये।"

आधुनिक एकांकी का विकास पश्चिम प्रेरित है। अतः पाश्चात्य समीक्षकों एवं विद्वानों के मंतव्यों से परिचित होना भी अत्यावश्यक है। पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ, भारतीय परिभाषाओं से काफी मिलती-जुलती हैं। जैसा कि डॉ. कीथ ने एक अंक वाले नाटकों को ही एकांकी माना है। उनके मतानुसार "The Anka, or One-act play, is represented by very few specimen's."[31] मार्जोरी वोल्टन का एकाकी के सम्बंध में कथन है कि "बिना अंक और दृश्य-विभाजन के भी नाटक हैं। इनका सबसे स्पष्ट उदाहरण वह नाटक रुप है जो कलाप्रेमियों के बीच बहुत लोकप्रिय है और जिसमें बहुत अच्छे नाटक भी हैं, जिसे एकांकी नाटक कहा जाता है। अपने शुद्ध रुप में यह 25 से 45 मिनट की अवधि का होता है और

कार्यव्यापार बहुत सघन होता है।"[32]

Percival Wilde के मतानुसार - "The time factor is important, while the speed of action may be accelerated or retarded, it must not been so far from that of real life that it is wholly rejected"[33] अर्थात् उनका कहना है कि "नाटक जीन का ऐसा सुव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण है, जो दर्शकों में संवेग उत्पन्न करता है। एकांकी नाटक की विशेषता उच्चकोटि की अन्विति एवं मितव्ययिता मे है, यह अपेक्षाकृत कम अवधि में अभिनीत होने के लिए होता है और अपनी समग्रता में ग्रहण किये जाने के लिए।"[34] ब्लैंक फोर्ट का मानना है कि "एकांकी पहले एक दृश्य का होता था, किन्तु आज एकांकी पाँच मिनट से लेकर एक घण्टे की अवधि में से कहीं का भी हो सकता है।"[35] कोजलेन्को एकांकी में दृश्य को महत्ता नहीं देते हैं उनका कहना है कि "एकांकी में दृश्य होना आवश्यक नहीं है।"[36]

Water Prichard Eaton Says that "The One Act Play, by its nature and the rigid restrictions of medium, has to confine itself to a single episode or situation and this situation, in turn, has to grow and develop out of itself"[37] अर्थात् पाश्चात्य समीक्षक पिकर्ड ईटन ने एकांकी का स्वरुप विश्लेषित करते हुए लिखा है कि-"एकांकी की प्रकृति ऐसी होती है कि उसमें नाटककार को किसी विशेष समस्या, किसी विशेष परिस्थिति अथवा घटना का इस प्रकार नियोजन करना पडता है कि वह धीरे-धीरे अपने आप विकसित हो जाये।"[38] The technique of One Act Play में वर्णित है कि एकांकी में एक ही घटना फैलकर दर्शकों के मन पर एक विशेष प्रभाव साम्य प्राप्त करती है। अर्थात It should aim at making a single impression, should possess singleness of situation, and should concentrate its interest on a single character or group of characters."[39] साथ ही एकांकी की विशेषता बताते हुए उसके सम्बंध में कहा गया है कि– "The chief perhaps the only quality of short play's opening is that it must capture the audience's interest."[40]

पूर्ववर्ती पृष्ठों में वर्णित एकांकी के सम्बंध में विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाओं का अध्ययन करते हुए निष्कर्ष रुप में जो तथ्य सामने आते हैं, वे इस प्रकार हैं : सर्व प्रथम एकांकी का सम्बंध रंगमंच से जोडनेवाले विद्वानों का मत प्रस्तुत है। उनके मतानुसार एकांकी वह विधा है जिसका सीधा सम्बंध रगमंच से जुडा हुआ है। हिन्दी एकांकी से पूर्व संस्कृत नाट्य की एक दीर्घकालीन सुदृढ नाट्य परंपरा अस्तित्व में थी जिसने देश की आधुनिक अनेक भाषाओं के नाट्य-साहित्य को प्रभावित किया है। संस्कृत नाटक का

सीधा सम्बन्ध अभिनय प्रदर्शन से था। इसी को नाट्य-शास्त्र में दृश्य-काव्य भी कहा गया है। डॉ. भूवनेश्वर महतो ने लोकगान के आलोक में एकांकी को दृश्य-काव्य ही माना है। एकांकी को एक अंक में समाप्त होनेवाला छोटा नाटक मानने वालो में डॉ. सिद्धनाथ कुमार, जशवंत शेखड़ीवाला, डॉ. ओझा तथा डॉ कीथ आदि पाश्चात्य विद्वानों के मत प्रस्तुत हैं। जशवंत शेखडीवाला ने एक अंक के नाटक में जो अन्तर बाह्य संघर्ष, पात्र-सृष्टि, गतिशील कथानक, रस की अभिव्यक्ति आदि नाटक के तत्वों का समावेश करते हुए एकांकी के स्वरुप को प्रतिपादित किया है।

आधुनिक एकांकी के सम्बन्ध में सदगुरुशरण अवस्थी के मतानुसार इसमें एक घटना, परिस्थिति अथवा समस्या की प्रधानता आवश्यक है। उन्होंने एकांकी में किसी एक ऊँचे दार्शनिक विचार, ऊँची चिंतना अथवा गंभीर समस्या को अधिक महत्व दिया है। अवस्थीजी के विचार से सहमत होते हुए सेठ गोविन्ददास जी भी एकांकी के मूल में किसी एक विचार या समस्या का निरुपण महत्वपूर्ण मानते हैं। सेठजी ने समस्या-विचार को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए एकांकी में आंतरिक संघर्ष की आवश्यकता पर भी जोर दिया है। इसी मत से मिलता-जुलता विचार डॉ. रामकुमार वर्माजी का है। उन्होंने एकांकी में एक घटना के महत्व के साथ-साथ कौतूहल के संचय का भी महत्व माना है। एकांकी का प्रभावशाली रुप जिज्ञासा से उद्‌भुत है और यह जिज्ञासा संघर्ष से पोषित होती है।[41] आदर्श एकांकी की रुपरेखा बताते हुए वर्माजी का कहना है कि एकांकी की समाप्ति वहाँ होनी चाहिए जहाँ कौतूहलता चरमसीमा पर पहुँचकर परिणित होती है।

उपर्युक्त मत से साम्य रखनेवाले विचार डॉ. दशरथ ओझा के भी हैं। उन्होंने एकांकी की परिभाषा को अधिक स्पष्ट करते हुए प्रासंगिक कथाओं का निषेध, विविध घटनाओं तथा चारित्रिक विकास के विस्तार को अस्वीकार किया है। डॉ नगेन्द्र के विचार मे एक अंक, एक महत्वपूर्ण घटना अथवा विशेष परिस्थिति, उद्दीप्त क्षण, एकता आदि के साथ संकलनत्रय की अनिवार्यता स्वीकार की गई है। अमरनाथ गुप्त का मत डॉ. नगेन्द्र और वर्माजी से साम्य रखता है। इन्होंने भी एक ही विषय या घटना को प्राथमिकता दी है। तत्वों के आधार पर देखें तो खत्री जी ने उन्हीं तत्वों पर विशेष जोर डाला है, वे तत्व हैं - संकलनत्रय का निर्वाह और एक भावना या प्रभाव का चित्रण। अतः उनके विचार डॉ. वर्मा के मत से मिलता-जुलता ही है।

डॉ. एस पी. खत्री, डॉ. सिद्धनाथ कुमार, अमरनाथ गुप्त, डॉ ओझा, डॉ. वर्मा, 'अश्क' आदि

विद्वानों ने एकांकी की परिभाषा में अल्पकाल की अवधि निर्धारित करने पर जोर डाला है। एकांकी के लिए उपर्युक्त तत्वों के अतिरिक्त समय की मर्यादा का विशिष्ट महत्व है। ओझा जी मानते हैं कि एकांकी को अल्पकाल की ही अवधि में समाप्त हो जाना चाहिए। अमरनाथ गुप्त ने भी एकांकी में बिजली की रफ्तार सी गति पर विशेषतः बल दिया है। खत्रीजी ने एकांकी की संक्षिप्तता, समय की कमी की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। ब्लैंक फोर्ट, मार्जोरी वोल्टन, पर्सिवल वाइल्ड आदि पाश्चात्य विचारकों ने भी अवधि की सीमा निर्धारित की है। एकांकी की परिभाषा अवधि के आधार पर निश्चित किया है। डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने ब्लैंक फोर्ट के मत को तर्कसंगत नहीं माना है। उनका मानना है कि यह प्रभाव 5 मिनट की अवधि मे कोई भी सशक्त एकांकी उत्पन्न नहीं कर सकता है। यही रस परिपाक की क्रिया एकांकी की कसौटी है।[42] यद्यपि माजोरी वोल्टन और पर्सिवल वाइल्ड का मत समीचीन है क्योंकि वोल्टन ने एकांकी की न्यून अवधि 25 मिनट की रखी है, पर्सिवल ने केवल अल्पवधि कहा है।[43]

साहित्य मर्मज्ञों की एकांकी विषयक उपर्युक्त परिभाषाएँ एकांकी के आधुनिक स्वरुप को निरुपित करने में अपूर्ण-सी हैं। एकांकी का स्वरुप दृश्यों की गिनती पर निर्भर नहीं होता है। एकांकी के प्रमुख लक्षणों में कथानक की कुतूहलता, प्रभावशीलता, मनोरंजकता, आंतर-बाह्य संघर्ष, काल-संकलन, घनीभूत घटनाएँ, वैविध्यपूर्ण तथा प्रभावोत्पादक संवाद, जीवंत वातावरण, आकस्मिक चमत्कृतिपूर्ण अंत, भाव की पराकाष्ठा, अभिनय दृश्य, अल्पकालीन अवधि आदि को ही विद्वानों ने एकांकी का प्रधान तत्व माना है। एकांकी में कोई-न-कोई उद्देश्य अवश्य निहित होना चाहिए। विषय कुछ भी हो सकता है जैसे-समाज, इतिहास, धर्म, पुराण, राजनीति, मनोभाव अर्थात् कोई मुख्य विचार। कम-से-कम समय में पूर्ण प्रभाव डाल देना, घटना को स्पष्ट कर देना अथवा चरित्र-चित्रण कर देना एकांकी की विशेषता है। 'संक्षिप्तता' एकांकी की प्रमुख विशेषता है। आधुनिक एकांकी नाटक एक स्वतंत्र विधा और एक पूर्ण विकसित कला की अभिव्यक्ति का माध्यम है। वस्तुतः एकांकी न तो नाटक का संक्षिप्त रुप है और न ही एक अंक वाला नाटक, अपितु यह कहानी के समान (जो उपन्यास से सर्वथा भिन्न मानी जाती है) एक स्वतंत्र विधा है।

समग्रतः कहा जा सकता है कि एकांकी विशिष्ट जीवन-सत्य की एकाग्र अभिव्यक्ति करनेवाली संक्षिप्त रचना है। इसमें जीवन का एक पक्ष पूर्णता के साथ व्यंजित होता है।

हिन्दी एकांकी का आरंभ और विकास :

हिन्दी एकांकी का इतिहास बहुत सीधा-सपाट नहीं रहा है। परम्परा के अतिरिक्त अनेक परिवर्तनों,

प्रभावों, मोड़ों और प्रश्नों से गुजरते हुए अपना विकास करता रहा है। आधुनिक हिन्दी नाट्य-साहित्य नवीनता और प्रयोगों का साहित्य है। हिन्दी नाटक में जहाँ वस्तुगत नवीन उपलब्धियाँ हुई, वहीं उसमें शैली-शिल्प के नए प्रयोग भी हुए हैं। अन्य विधाओं के समान हिन्दी नाटक ने भी पाश्चात्य विचारधाराओं को, दृष्टिकोण को, टेकनीक को अपनाया और अपने आपको बदलते हुए युग-जीवन के अनुरुप ढालकर समृद्ध किया। नाटकों में भावुकतापूर्ण वातावरण की, कल्पनाजन्य चित्रों की सृष्टि करनेवाले नाटककार जीवन की बढती हुई समस्याओं और वर्तमान सामाजिक संघर्ष की ओर उन्मुख हुए। यूरोप में जिस समय रोमांटिक और कोरे भावुकतापूर्ण एवं आदर्शवादी नाटको के विरुद्ध प्रतिक्रिया आरंभ हो चुकी थी, जन-समूह नयी चेतना की माँग कर रहा था, उस समय उनकी माँग को पूरा कर रहे थे इब्सन और शॉ। इब्सन के नाटकों की स्वाभाविकता, जीवन की सच्ची व्याख्या और शॉ के यथार्थवादी चिन्तन और तर्क-शक्ति ने, नए प्रयोगों में क्रान्ति ला दी थी। विश्व के प्रथम श्रेणी के इन नाटककारों की विशेषताओं को हिन्दी नाटककारों ने भी ग्रहण किया। हिन्दी नाटककार यह अच्छी तरह अनुभव कर रहा था कि जीवन की नित-प्रति की झाँकी, मानव चरित्र की झलक, स्वाभाविक रुप में प्रस्तुत करना कितना आवश्यक है। इस स्वाभाविकता को लाने, मानव-जीवन की विविधता-विषमता को अभिव्यक्ति देने और हिन्दी नाटकों को रंगमंचीय बनाने की प्रवृत्ति के फलस्वरुप नाटकों के रचना-विधान में अन्तर पडता गया। इन नए प्रयोगों को इस रुप में देखा जा सकता है - एकांकी, गीतिनाट्य, रेड़ियो नाटक, अन्य प्रयोग।[44]

हिन्दी साहित्य में एकांकी नाटकों की उत्पत्ति उनकी अनिवार्यता के कारण हुई है। जिस प्रेरणा के परिणामस्वरुप उपन्यास के साथ लघु आख्यायिका का आविर्भाव हुआ, उसी प्रेरणा के परिणामस्वरुप अनेकांकी नाटकों का जन्म हुआ है। आज न केवल हिन्दी साहित्य बल्कि विश्व-साहित्य ही व्यर्थ के विस्तार से दूर हो रहा है, मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक उत्कर्ष की ओर तेजी से अग्रसर हो रहा है। जिस प्रकार आख्यायिका बहुत ही परिमित शब्दों में सधे हुए ढंग से संक्षिप्त लिखी जाने लगी है उसी प्रकार साहित्य के सभी अंग अभिव्यक्ति की उसी शैली की ओर उन्मुख हैं। युग की विशेषता से साहित्य कब अछूता रह सकता? हिन्दी में एकांकी नाटकों की उत्पत्ति का कारण युग की यही विशेषता है।

एकांकी के आरंभ के सम्बंध में विद्वानों में अनेक मतभेद हैं। मोटे तौर पर ये मतभेद दो प्रकार के हैं। प्रथम मत के अनुसार विद्वानों ने एकांकी का प्रारंभ भारत के प्राचीन सस्कृत-साहित्य से माना है। द्वितीय मत को मानने वाले एकांकी को पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव मानते हैं। प्रथम मत को मानने वालों में - डॉ. ओझा, डॉ. सिद्धनाथ कुमार, डॉ सरनामसिंह शर्मा 'अरुण', प्रो. ललितप्रसाद शुक्ल, डॉ. रामचरण महेन्द्र

आदि भारतीय विद्वान हैं। इनके अतिरिक्त कतिपय पाश्चात्य विद्वानों ने भी एकांकी का सम्बन्ध प्राचीन भारतीय साहित्य के साथ जोडा है। इनमें डॉ. कीथ, प्रो. मैक्समूलर, सिलवियन, लिबी, सरवान स्कूदर और डॉ. हर्टल आदि विद्वानों के नाम आते हैं। एकांकी की प्राचीनता सिद्ध करते हुए ये विद्वान वैदिककालीन साहित्य में एकांकी के बीज निहित मानते हैं तथा इसे मूलतः धार्मिक रुप में विकसित विधा स्वीकारते हैं। इन विद्वानों के मतों में भी कतिपय विभिन्नता पायी जाती है। डॉ. रामचरण महेन्द्र और डॉ. कीथ एकांकी का आरंभ वेद की ऋचाओं से मानते है।[45] डॉ. ओझा संस्कृत नाट्य-शास्त्र में रुपक, उपरुपक के भेदों को एकांकी के निकट मानते हैं। इन्होंने रुपकों में व्यायोग, उत्सृष्टांङ्क, भाण, वीथी और प्रहसन को एकांकी माना है तथा उपरुपकों में नाट्यरासक, रासक, गोष्ठी, उल्लाप्य, काव्य, श्रीगदित, विलासिका और पङ्कण अल्प परिवर्तन के साथ एकांकी की ही कोटि में स्वीकार किया है।[46] कविभास कृत 'उरुभंग' और नीलकंठ कृत 'कल्याण सौगंधिक' अपने युग के प्रसिद्ध एकांकी माने जाते हैं।[47] डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने उस युग के अनेक नाट्यशैलियों में सबसे सुदृढ़ संस्कृत की नाट्य-परंपरा को माना है। प्रो. ललितप्रसाद शुक्ल ने भी एकांकी की प्राचीन भारतीय परंपरा की ओर संकेत करते हुए कहा है कि "जहाँ एक ओर ग्यारह अंकों के वृहत्काय नाटक लिखे गए वहीं विविध रुप और प्रकार के एकांकी और कहीं-कही तो केवल तीन दृश्यों तक के लघुरुपक लिखने की परंपरा मिलती है।"[48] ओझाजी आगे चलकर हिन्दी एकांकी का आरंभ जैन कुल रासक और वैष्णव रासकों से मानते हैं।[49] जबकि प्रो. हिलब्रैंड और डॉ. कीथ रुपक के प्रादुर्भाव से भी पूर्व भारत में प्रचलित एवं लोकप्रिय स्वांगों को एकांकी के पूर्वज बताते हैं। उपर्युक्त मतों के अतिरिक्त एक मत रास नाटक को ही एक प्रकार की छोटी एकांकी कहते हैं।[50] रास का स्वरुप 400 वर्षो से अधिक पुराना है।[51] डॉ. रामचरण महेन्द्र ने अधिक स्पष्ट शब्दो में, एकांकी को प्राचीन नाट्य-साहित्य में आज से कुछ भिन्न रुप में निहित माना है। उनके मतानुसार आधुनिक एकांकी का रुप आज कुछ परिवर्तित अवश्य हो गया है किन्तु यह कहना भ्रामक है कि भारत में एकांकी थे ही नहीं।[52] आपका मानना है कि पाश्चात्य प्रभाव से आधुनिक एकाकी साहित्य की शैली प्रभावित और परिवर्तित अवश्य हुई है किन्तु इससे यह नही समझना चाहिए कि एकांकी भारतवर्ष में थे ही नहीं।[53]

एकांकी के प्रारंभ के संबंध में द्वितीय प्रकार के मत को मानने वालो मे - डॉ. एस.पी. खत्री, डॉ. नगेन्द्र,प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त, ओमप्रकाश सक्सेना आदि हैं। इन्होंने एकांकी को पश्चिमी देन मानते हुए हिन्दी नाट्य साहित्य में उसे नवीनतम रुप में स्वीकार किया है तथा स्पष्टतः इस पर अंग्रेजी का प्रभाव माना है न कि संस्कृत का। डॉ. एस.पी. खत्री का कहना है कि एकांकी अंग्रेजी साहित्य की देन है। हिन्दी एकांकी के आरंभकाल को ध्यान में रखते हुए इन्होंने कहा है कि एकांकी का प्रारंभ जब 20वीं शताब्दी में शुरु हुआ

तो स्पष्ट है कि उस पर अंग्रेजी का प्रभाव है न कि संस्कृत का।[54] डॉ. नगेन्द्र भी इसी मत से सहमत हैं। कतिपय प्राचीनवादी आचार्यो ने एकांकी को पश्चिमी देन मानने वाले आलोचकों की पश्चिमी पूजा पर अपनी खीझ प्रस्तुत की तब उनका प्रत्युत्तर देते हुए डॉ नगेन्द्र ने कहा कि, "हमें सत्य की रक्षा के लिए थोडी देर अपने देश प्रेम को दबाकर स्वीकार करना पडेगा कि हिन्दी एकांकी इसकी कहानी की तरह पश्चिम से आया है।"[55] ओम प्रकाश सक्सेना ने डॉ. नगेन्द्र के मत का ही समर्थन किया है। आपके कथनानुसार "हिन्दी एकांकी कला 20वीं सदी की देन है और इसकी प्रेरणा और उदय में पाश्चात्य साहित्य और जीवन की बौद्धिकता, द्रुतगामिता तथा उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ संघर्षमय जीवन ही जिम्मेवार है। फलतः इसकी कला और उसकी उपलब्धि में एक ऐसी आधुनिकता है कि इसका संबंध किसी भी प्राचीनकला के शास्त्र से नही जोडा जा सकता है।"[56] प्रो. अमरनाथ गुप्त ने भी सक्सेनाजी के मत को स्वीकृति प्रदान करते हुए कहा है कि 'एकांकी नाटक हिन्दी में सर्वथा नवीनतम कृति है। इसका जन्म हिन्दी साहित्य में अंग्रेजी के प्रभाव से कुछ ही वर्ष पूर्व हुआ है।"[57] प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने भी कुछ ऐसा ही मन्तव्य व्यक्त किया है "महासमर से कुछ वर्ष पूर्व जब अंग्रेजी रंगमंच लगभग एक शताब्दी की गहरी निद्रा से आँखें मलकर उठ रहा था तो एक नए ढंग के छोटे नाटक का जन्म हुआ और शीघ्र ही वह लोकप्रिय हो गया।"[58] प्रेम नारायण शुक्ल ने भी एकांकी के स्वरुप को विदेशी देन माना है। उनके कथनानुसार इंग्लैण्ड में व्यावसायिक रंगशालाओं की स्थापना जन-समाज के मनोरंजन के लिए एक लघु-नाटक के प्रदर्शन की व्यवस्था थी। ये लघु नाटक ही एकांकी के प्रारुप हैं।[59]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्ष रुप में यह कहा जा सकता है कि हिन्दी एकांकी आधुनिक युग की ऐसी विकासात्मक विधा है जिसका बीज चाहे वैदिक साहित्य में निहित भी हो तब भी उसका स्वरुप सर्वानुमत से पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित अपनी निजी विशेषताओं को लिए हुए है। एकांकी की प्रमुख विशेषताओं का परिचय देते हुए डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का कहना है कि "एकांकी का स्वरुप नितान्त मौलिक और इसका स्वर नितान्त यथार्थवादी रहा है। जीवन का जितना तनाव, जितना द्वन्द्व इस माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है वह अपने आप में अपूर्व था नितान्त मौलिक। आधुनिक हिन्दी एकांकी के सम्बन्ध में यह निर्विवाद है कि इसकी शिल्पविधि निश्चय ही पश्चिम से ग्रहण की गई है लेकिन जिस साहित्यिक परंपरा, जिन सहज शक्तियों से हिन्दी एकांकी उत्पन्न हुई वह विशुद्ध रुप से अपनी है, स्वजातीय हैं, उसके सारे संस्कार अपने हैं, वे सारे स्वर अपने हैं।[60] प्राचीन संस्कृत साहित्य में कतिपय नाट्य के प्रकार यद्यपि एकांकी के अधिक निकट हैं फिर भी एकांकी का आधुनिक स्वरुप निश्चित ही पाश्चात्य साहित्य की देन कहा जा सकता है। प्राचीन संस्कृत नाट्यशैलियों और आधुनिक एकांकी के बीच के अन्तर को स्पष्ट करते

हुए विद्वानों ने जो तथ्य व्यक्त किए हैं वे इस प्रकार हैं:-

1. संस्कृत नाटकों में वह अन्तर्द्वन्द्व, संघर्ष और मानसिक प्रक्रिया का वह विश्लेषण नहीं पाया जाता जो आधुनिक एकांकी का प्राण है।
2. जीवन की वास्तविकता के प्रति संस्कृत नाट्यकारों (एकांकीकारों) की उतनी पैनी दृष्टि नहीं होती जितना आज के नाट्यकार अथवा एकांकीकार की होती है।
3 आज महती घटनाओं की बजाय दैनिक घटनाओं के घात-प्रतिघात का अधिक महत्व नाट्यकारों द्वारा दिया जाता है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति चरित उभरता अथवा गिरता है अर्थात् आज का नाट्यकार दैनन्दिन जीवन की सच्ची व्याख्या करना अपना कर्तव्य मानता है। केवल संस्कृत नाट्यकारों की भाँति राजा-महाराजा की स्थिति का प्रदर्शन नही करते रहे जो आज के एकांकी का अनिवार्य तत्व माना जाता है।

इस प्रकार संस्कृत एकांकी हिन्दी एकांकियों से पृथक् है। दोनों की पृथक-पृथक स्वतंत्रधारा है। वात्सायन का कथन है - "संस्कृत एकांकियों की न तो कोई अविच्छन्न परंपरा मिलती है और न भारतेन्दुकाल के एकांकियों में आधुनिक एकांकी के तत्व मिलते हैं।"[61]

'एकांकी' नाम अंग्रेजी के माध्यम से हिन्दी में अपनाया गया।.अतएव ये स्पष्ट है कि डब्ल्यू.डब्ल्यू. जैकब के 'बंदर का पंजा' लिखने से पूर्व हिन्दी में वैसे ही नाटकों की रचनाएँ होने लगी थी जिस प्रकार अंग्रेजी-साहित्य का प्रभाव ग्रहण करते हुए उपन्यास, कहानी, निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण आदि साहित्य की अन्य विधाओं का विकास हुआ है उसी प्रकार एकांकी का विकास भी आधुनिक युग की देन है। यद्यपि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि एकांकी पहले थे, उनका कोई भारतीय आदर्श था, किन्तु वे एकाकी आधुनिक एकांकी से रचना, शिल्प और कला की दृष्टि से भिन्न थे। अतः सभी एकमत से इसे स्वीकार करते हैं कि आधुनिक एकांकियाँ अंग्रेजी के प्रभाव से अनुप्रेरित एवं अनुप्राणित है। आधुनिक युग में मशीनीकरण, औद्योगिक विकास, अति बौद्धिकता एवं तार्किकता, सुख-सुविधा के नए-नए उपकरणों का आविष्कार, शिक्षण की व्यापक-व्यवस्थाएँ, द्रुतगामिता, व्यक्तिवादी चेतना, राजनैतिक-सामाजिक जीवन के बदलते मापदण्ड तथा जीवन की आपाधापी के परिणामस्वरुप उत्पन्न संघर्ष ने एकांकी के स्वरुप निर्माण, उसके विकास तथा उसके प्रचार-प्रसार मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

आधुनिक हिन्दी एकांकी का प्रारंभ कब से हुआ? अधिकांशत विद्वानों ने हिन्दी एकांकी का प्रारंभ भारतेन्दु से ही माना है। इनमें प्रो. सत्येन्द्र, डॉ. रामचरण महेन्द्र, ललित प्रसाद शुक्ल, ओम प्रकाश,

सक्सेना बलवंत गार्गी, डॉ. सूर्यकांत, नेमिचन्द्र जैन, डॉ. सिद्धनाथ कुमार, शुक बिहारी मिश्र और श्याम बिहारी मिश्र आदि भारतेन्दु हरिश्चंद्र को हिन्दी का प्रथम एकांकीकार मानते हैं। डॉ. सोमनाथ गुप्त ने भी स्वीकार किया है कि "एकांकी की प्रथा उन्हीं से चली है।"[62] ओमप्रकाश सक्सेना ने लिखा है - "जिस प्रकार हिन्दी साहित्य में नाटकों का प्रारंभ भी भारतेन्दु या उनकी मण्डली से हुआ। सन् 1973 से हम हिन्दी एकांकी का प्रारंभ मान सकते हैं, जबकि भारतेन्दु ने 'प्रेमयोगिनी' लिखा।"[63] इस तथ्य का प्रतिपादन डॉ सूर्यकान्त ने भी किया है- "भारतेन्दु हरिश्चंद्र हिन्दी नाटक के जन्मदाता माने जाते हैं। एकांकी का सूत्रपात उन्होंने ही किया।"[64] डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने इस तथ्य पर विचार करते हुए लिखा है "सामूहिक रुप से विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि इस काल के एकांकी नाटकों पर भारतेन्दु हरिश्चंद्र का व्यापक प्रभाव पडा है। आधी शताब्दी के हिन्दी एकांकी साहित्य पर भारतेन्दु की लबी छाया पडी हुई है।"[65] इसी बात को श्यामबिहारी मिश्र और शुकबिहारी मिश्र ने भी स्वीकार किया है।[66]

भारतेन्दु काल :

आज के विकसित एकांकियों की साहित्य धारा में जो प्रथमावस्था हो सकती है वह भारतेन्दु जी में हमें स्वतः मिलती है। अतः भारतेन्दु जी को हिन्दी का प्रथम एकांकीकार मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती है। क्योंकि "..... भारतेन्दुजी के लिखे मौलिक नाटकों मे से 'चन्द्रावली' और 'अंधेर नगरी' तो नाटक हैं शेष सभी एकांकी हैं। (ये उद्धरण प्रो. सत्येन्द्रजी के हिन्दी एकांकी से है।) हिन्दी एकांकी का प्रारंभ सन् 1875 ई. से है जबकि भारतेन्दु ने 'प्रेमयोगिनी' लिखा मान सकते हैं। भारतेन्दु काल से पूर्व संस्कृत की नाट्य परंपरा लगभग मृतप्रायः सी हो गयी थी। देश के विभिन्न क्षेत्रों में लोकनाट्य की विभिन्न परंपरा लोकजीवन के साथ जुडकर चली आ रही थी लेकिन साहित्यिक नाटकों की परंपरा नष्टप्रायः हो चुकी थी। भारतेन्दुजी ने हिन्दी गद्य के विकास के लिए प्राचीन भारतीय नाट्य परंपरा को पुनः संजीवन करने का यत्न किया। अनेक प्रकार के नाटकों की रचनाएँ की। इनमें कई नाटक अनुवादित हैं और कई नाटक मौलिक रचे गए। सस्कृत नाट्य परंपरा से प्रेरणा ग्रहण करते हुए उन्होंने जिन नाटकों की रचना की उनमें एकांकियो का भी समावेश है।

19 वी शताब्दी के प्रारंभ से इस देश में एक नया सांस्कृतिक मोड आया। यह पुनर्जागरण, नवोन्मेष और विद्रोह का काल था। नवीनता और आधुनिकता से युक्त यह परिवर्तन सन 1850 ई. तक स्पष्ट परिलक्षित होने लगा था। यही स्वर भारतेन्दु युगीन साहित्य में मुखरित हुआ। यह समय भारत में हलचलों का था। सामाजिक, धार्मिक सुधार, नवीन शिक्षा, सांस्कृतिक जागरण, राजनीतिक गतिविधि, आर्थिक

ढाँचे का विघटन और राष्ट्रीय जागरण के सम्बन्ध में जितनी क्रियाशीलता और हलचल दिखाई देती है, इसके पहले कभी नहीं थी। इस युग का इतिहास अंग्रेजों द्वारा भारत के सामाजिक, आर्थिक शोषण का इतिहास है, मुख्यतः आर्थिक शोषण का। इस युग में एक ओर सामंतवाद तथा पुराण पंथी लोग सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्र में यथास्थिति बनाए रखने के लिए प्रयत्नशील थे और दूसरी ओर ऐसे मध्यवर्ग का उदय हो रहा था जो वैज्ञानिक आविष्कारों तथा पाश्चात्य शिक्षा से लाभ उठाकर एक नयी पूँजीवादी संस्कृति का विकास करना चाहता था। अपने इस प्रयत्न में मध्यवर्ग को सामंतवाद के साथ ही साम्राज्यवाद का विरोध करने को विवश होना पड़ा। अतः यह युग दो विचारधाराओं की संक्रांति का काल है। आधुनिक हिन्दी साहित्य का प्रारंभिक चरण भारतेन्दु युग इसी का प्रतिफल है।

भारतेन्दु जी के एकांकियों का निर्माण मूलतः संस्कृत नाट्यशास्त्र के अनुसार हुआ है किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे अंग्रेजी से प्रभावित नहीं हुए। भारतेन्दुजी के साहित्य पर अंग्रेजी साहित्य का, विचाराधारा और भाषा का प्रभाव था। आपने पारसी स्टेज से प्रभावित सस्ते मानसिक हीनता और पतन करनेवाले नाटकों से हटाकर जनरुचि का परिष्कार प्रारंभ किया। वे संस्कृत के आदर्श ले मौलिक प्रतिभा से स्पर्श से साहित्यिक एकांकियों की रचना कर सके। हरिश्चन्द्र जी ने पौराणिक और ऐतिहासिक कथानक अधिक चुने फिर भी उनका नाटकीयकरण सर्वथा मौलिक है। रचना शैली में संस्कृत नाट्यशास्त्र के सिद्धान्तों से प्रभावित होते हुए भी आप हिन्दी के मौलिक एकांकीकार हैं। अपने नाट्यविधान में संस्कृत के पूर्ण पक्षपाती नहीं हैं बल्कि उनमें निजी मौलिकता दिखती है। महाकवि भास, कांचन, राजशेखर आदि के आदर्शो पर इन्होंने हिन्दी में अनुवादित और मौलिक दोनों प्रकार के एकांकियों के प्रयोग किए। संस्कृत नाटको की भाँति आपके एकांकियों में गद्य और पद्य दोनों हैं। पारसी रंगमंच की दोहा-शेरवाली पद्धति की छाप उनके एकांकियों पर हैं। अंग्रेजी का प्रभाव बंग-साहित्य के माध्यम से उनकी एकांकी कला पर पड़ा है। प्रस्तावना का लोप, अंग्रेजी नाटकों के ढंग पर अंक विभाजन और दृश्य-विधान, भरत-वाक्य का अपेक्षाकृत कम प्रयोग, श्रव्य वस्तु का लोप आदि कुछ ऐसे लक्षण हैं जो भारतेन्दु जी धीरे-धीरे अपना रहे थे। आप नवीन विचारधारा से प्रभावित अवश्य हुए थे, किन्तु प्राचीनता से हटे नहीं थे। भारतेन्दु जी एकांकी लेखन के नए आदर्श प्रस्तुत कर रहे थे, यद्यपि ये प्रयोग पूरी तरह संस्कृत नाट्यशास्त्र के अनुकूल न थे। नई पुरानी मिश्रित प्रणालियों के अनुसार उनका निर्माण हुआ था।

भारतेन्दुजी ने संस्कृत नाट्शास्त्र से लक्षण लेकर थोड़े से रुपकों के प्रयोग प्रस्तुत किए हैं। स्वयं भारतेन्दु ने 'भारत-दुर्दशा' को नाट्य रासक, 'धनंजय-विजय' को व्यायोग, 'माधुरी' को रुपक, 'अंधेर नगरी' को प्रहसन और 'विषस्य विषमौषधम' को भाण उल्लेखित किया है। इनके माध्यम से तत्कालीन

नाट्यकारों के समक्ष वे उपभेदों के रुप, नाटकीय साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए प्रस्तुत कर रहे थे और साथ ही एकांकी लेखन के नए आदर्श प्रस्तुत कर रहे थे। भारतेन्दुजी के अनुवादित एकांकी नाटक हैं : 'भारत जननी', 'धनंजय-विजय', 'पाखण्ड-विडंबना'। इसके अतिरिक्त 'प्रेमयोगिनी', 'माधुरी', 'भारत-दुर्दशा' तथा 'नीलदेवी' आदि मौलिक रचनाएँ हैं जिन्हें एकांकी स्वीकार किया गया है। 'धनंजय-विजय' की विशेषता है कि इसमें स्थान और समय की इकाईयों का सुंदर निर्वाह हुआ है। 'प्रेमयोगिनी' मौलिक एकांकी नाटिका है जो अपूर्णहै। हिन्दी एकांकियों में यथार्थवाद का प्रचलन इस नाटिका से होता है। 'माधुरी' मनोविश्लेषणात्मक शैली में विनिर्मित है और यह श्रृंगार का सफल उदाहरण है। 'भारत-दुर्दशा' को भारतेन्दु जी ने नाट्य रासक या लास्य रुपक का नाम दिया है। इसमें राजनीतिक समस्याओं को प्रथम बार एकांकी का विषय बनाया गया है। 'नीलदेवी' एक गीतिरुपक है। प्रो. ललिताप्रसाद शुक्ल ने आकार-प्रकार की इस नवीनता के कारण इसे आधुनिक एकांकी का पूर्वरुप कहा है। डॉ. सत्येन्द्र ने इसकी कथावस्तु की गतिशीलता के कारण इसे एकांकी माना है। अतः आकार-प्रकार और प्रभाव एकता की दृष्टियों से इसे एकांकी ही मानना उचित है। इसमें आधुनिक एकांकी के प्रायः सभी अंग बीज रुप में मिल जाते हैं। भारतेन्दुजी ने प्रहसन सुधारवादी दृष्टिकोण से लिखे। मनोरंजन के साथ-साथ समाज की रुढियाँ, जीर्ण-शीर्ण मान्यताओं तथा समाज की निर्बलताओं पर उन्होंने आवाज उठाई। इनके प्रहसनों का मूल विषय है- अतीत भारत के गौरव का चित्रण, वर्तमान पतितावस्था पर विक्षोभ तथा भविष्य के कल्याण की आशा है। आप के एकांकी नाटकों में सोद्देश्यता तथा जनरुचि का पुरा ध्यान रखा गया है। इनका प्रभाव इनके एकांकी कला पर पडा। इनका समय पराधीन देश के जागरण का था। ये अपने युग के वाणी थे। अपने नाटकों के माध्यम से देश दुर्दशा का चित्र उपस्थित करना, लोगों में राष्ट्रीय चेतना जगाना और उनके सामने उच्च आदर्श प्रस्तुत करना उनका उद्देश्य था। भारतेन्दुजी ने संस्कृत नाट्य परंपरा को भी ग्रहण किया और लोक नाटक, अंग्रेजी नाटक, बंगला नाटक तथा पारसी नाटक के प्रभावों को भी। इन सभी के उचित एवं संतुलित समन्वय की दिशा में उन्होंने अपने प्रयोग किए और हिन्दी एकांकी को ऐसी नींव दी जिस पर आगे चलकर एक विशाल प्रासाद निर्मित हो सका।

भारतेन्दुजी के अतिरिक्त उस युग मे एक अंक के नाटक लिखने वालों में श्रीनिवास दास, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' , बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, जनैन्द्र किशोर, बलदेव प्रसाद, प्रतापनारायण मिश्र, काशीनाथ खत्री, देवकीनन्दन त्रिपाठी, राधाकृष्णदास, अंबिकादत्त व्यास, अयोध्यासिंह उपाध्याय, किशोरीलाल गोस्वामी, श्री हरण, श्री निद्धलाल मिश्र, हरिश्चंद्र कुलश्रेष्ठ, लाला खड्ग बहादुल मल्ल आदि हैं।

'प्रह्लाद चरित्र', 'रणधीर और प्रेममोहिनी', लाला श्रीनिवास दासजी की एकांकियॉ हैं। 'प्रह्लादचरित्र' ग्यारह दृश्यों का चरित्र प्रधान धार्मिक एकांकी है। चरित्र-चित्रण के प्रति जागरुकता आपकी एक विशेषता है। इन्होंने रंग-निर्देश की दृष्टि से एकांकी को आगे बढ़ाया है। रंग-सूचनाओं की पूर्णता द्वारा आपने एकांकी-कला के विकास में यथेष्ट सहयोग प्रदान किया है। श्री बदरीनाथ चौधरी प्रेमघन जी के एकांकी धार्मिक आदर्शवादी और ऐतिहासिक यथार्थवादी भावनाओं को लेकर रचित हैं। 'प्रयागराम गमन' धार्मिक आदर्शवादी भावना को लेकर और 'संयोगिता स्वयंवर' ऐतिहासिक यथार्थवादी भावना पर रचित है। एक बड़े दृश्य में ही संपूर्ण घटनाऍ केन्द्रित कर देना प्रेमघनजी के टैकनीक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। आदर्शवाद की प्रतिष्ठा के साथ गद्य-पद्यमय शैली, स्वगत के प्रयोग, संक्षिप्त रंग-सूचनाऍ और अल्प-संख्यांक पात्रों के द्वारा आपके एकांकी विनिर्मित हैं। भट्टजी प्राचीन संस्कृत शैली पर सुधारवादी आदर्शमूलक एकांकियो की सृष्टि करते रहे। आपके छोटे-छोटे रुपक 'प्रदीप' में प्रकाशित हुए। 'शिक्षादान', 'जैसा काम वैसा परिणाम', 'आचार-विडंबन' आदि सामाजिक समस्यामूलक एकांकी हैं। 'रेल का विकट खेल', 'बालविवाह', 'कलिराज की सभा', 'कट्टर सूम' आदि आपके प्रहसन हैं। व्यंग्य मिश्रित हास्य के लिए गोस्वामी जी उल्लेखनीय हैं। आपने 'सती चन्द्रावली', 'श्रीदामा', 'अमरसिंह राठोड़', 'बूढ़े मूँह मूँहासे', 'तन मन धन श्री गुसाई जी के अर्पण', 'भंगतरंग', 'सरोजिनी' (अनुवादित) आदि एकांकियों में सामाजिक एवं राजनीतिक नवीन चिंतन को मुखरित किया है। अंकों या गर्भाको के स्थान पर केवल दृश्यों में ही तथावस्तु को संजोना आपकी विशेषता है। पौराणिक कथानक के साथ-साथ राजनीतिक एवं सामाजिक चितन पर आधारित एकांकियॉ आपकी देन हैं। इस काल के अन्य नाट्यकारों की अपेक्षा इनका व्यंग्य अधिक नूतनता का द्योतक है। जैन कथाओं को आधार बनाकर जैनेन्द्र किशोर ने एक चुटीला प्रहसन 'सोमासती' अथवा 'धर्मवती' (संवत् 1965) की रचना की। धर्म के साथ सामाजिक सुधार की भावना तथा एक ही अंक में सम्पूर्ण कथानक को व्यक्त करना इनकी विशेषता है। श्री बलदेव प्रसाद के 'लल्ला बाबू' प्रहसन में दृश्य के स्थान पर 'पर्दे' का प्रयोग है। पात्र संख्या अल्प है। आपने 'रामलीला विजय' एकांकी में सन् 1947 की साम्प्रदायिक समस्या को सुलझाने की दृष्टि से हिन्दू-मुस्लिम संगठन की मूल वृत्ति प्रस्तुत की है। एकांकी की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह दोहा-चौपाई वाली काव्य पद्धति से सर्वथा मुक्त है।

गोपीनाथ तिवारी ने अपने शोध-प्रबंध में भारतेन्दु कालीन नाटक साहित्य में यह मौलिक स्थापना की है कि हिन्दी के प्रथम एकांकीकार लाला काशीनाथ खत्री हैं। 'ग्राम पाठशाला', 'निकृष्ट नौकरी', 'सिंध देश की राजकुमारियाँ', 'गुन्नौर की रानी', 'महाराज लवजी का स्वप्न', तीन परम मनोहर ऐतिहासिक

रुपक के नाम से प्रसिद्ध हैं। सफल एकांकी की प्रायः सभी विशेषताएँ इनमें मिलती है। सामाजिक सुधारवादी एकांकियों के सृजन में आपने महत्वपूर्ण कार्य किया है। भारतेन्दु युगीन श्री देवकीनन्दन त्रिपाठी एक अच्छे व्यंग्य एकांकीकार हैं। आपका क्षेत्र सामाजिक तथा वृत्ति सुधारवादी है। 'रक्षाबंधन', 'सैंकडों में दस', 'जय नारसिंह की', 'स्त्री चरित्', 'वेश्याविलास', 'बैल छः टके का', तथा 'कलियुगीजनेऊ' आदि आपके उल्लेखनीय प्रहसन हैं।

भारतेन्दु काल के प्रतिभावान् लेखको में अंबिकादत्त व्यासजी हैं।'गोसंकट', 'कलियुग और घी', 'ललितानाटिका', 'मन की उमंगें', 'मरहट्ट', 'देवपुरुष दृश्य' और 'भारत सौभाग्य' आदि एकांकियों को ब्रजरत्न दास ने लघु नाटक संबोधित किया है। 'कलियुग और घी' प्रतीक पद्धति पर आधारित हैं। इसमें दृश्य परिवर्तन नहीं हैं। 'ललिता नाटिका' (सन् 1883) में कृष्ण और ललिता की प्रेम कहानी का नाटकीय कथानक है। इसमें रामलीला में सुधार का प्रयत्न माना जा सकता है। यद्यपि इसका विषय पुराना है, अंत सांकेतिक है , प्रस्तुत शैली में परंपरागत है पर इसमें नवीनता का प्रयास है। 'भारत सौभाग्य' में चार दृश्य हैं। इस पर भारतेन्दु जी की छाया स्पष्टतः परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त व्यास जी का एक 'अखबारी प्रहसन' पीयुष प्रवाह में मिलता है। श्री किशोरीलाल जी के दो एकांकी 'नाट्य संभव' (रुपक) और 'चौपट चपेट' (प्रहसन) उपलब्ध हैं। 'नाट्य संभव' में आठ दृश्यों में नाटक की उत्पत्ति को कथानक बनाकर एकांकी का रुप दिया है। 'चौपट चपेट' प्रहसन में संवादों की अधिकता से कथा विकास शिथिल हो गया है। हल्के हास्य का प्रयोग आपकी विशेषता है जो शिष्ट तथा स्वाभाविक है। एकांकियों की मूल वृत्ति सुधारवादी और आदर्शमूलक है। एकांकी के रस तत्व पर आप विशेष जोर देते हैं। श्री हरण की 'बाल विवाह' एकांकी अपूर्ण रचना है। आपकी वृत्ति सामाजिक सुधारवादी तथा विशेषता चुभते हुए व्यंग्य हैं। 'विवाहिता विला' में प्रचलित अंधश्रद्धा तथा अंधविश्वास पर श्रीनिद्धीलाल ने प्रकाश डाला है। इसमें दृश्यों के स्थान पर झाँकी शब्द तथा सूत्रधार और नटी का प्रयोग हुआ है। 'अपनी टेक निबाही' दस पृष्ठों का छोटा सा प्रहसन है जिसमें आठ संक्षिप्त दृश्य हैं। जिन्हें प्रवेश कहा गया है। यह मनोरंजन प्रधान रचना है तथा कथानक का विकास आकर्षक है। अपने संलाप कौशल के लिए कुलश्रेष्ठजी की यह एकांकी हमारा ध्यान अपनी ओर विशेष रुप से आकृष्ट करती है। 'भारत आरत' नाम प्रहसन तथा 'भारत ललना' नामक एकांकी की रचना लाला खड्ग बहादुर मल्ल ने की है। 'भारत आरत' चार दृश्यों में है। इसमें नाटकीयता कम है। सूत्रधार और नटी की प्रस्तावना के बाद ही यह शुरु होता है।

उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त इस युग में अनेक अन्य ऐसे लेखक हुए हैं जिनकी रचनाएँ पत्र-

पत्रिकाओं तक सीमित हैं। सभी ने विषय की दृष्टि से समाज-सुधार और पौराणिक आदर्शो की उनमें स्थापना की। इस प्रकार भारतेन्दु युग हिन्दी एकांकियों के विकास का आरंभिक युग कहा जा सकता है। राजनैतिक परतंत्रता के युग में, युगीन साहित्यकार पौराणिक, ऐतिहासिक वस्तु के माध्यम से जन-जागृति और लोकोपदेश का कार्य कर रहे थे। एकांकीकारों ने मनोरंजन का सहारा लेकर अपने उद्देश्य को प्रतिपादित करने का यत्न किया। यही कारण है कि अनेक प्रहसन एकाकियों के रुप में लिखे गए। इन प्रहसनों का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक एवं आर्थिक स्थितियों पर प्रकाश डालना है। देवकीनन्दन त्रिपाठी, बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी आदि उत्कृष्ट प्रहसन रचनाकार हैं क्योंकि भारतेन्दु जी जैसा चुभता व्यंग्य और स्वाभाविक हास्य विनोद इन्हीं में दीखता है। परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण और व्यापक क्षेत्र को अपनी सीमा में समेटने के कारण इन प्रहसनों का इस काल में निश्चय ही महत्व है। तत्कालीन समाज की दृष्टि से ये प्रहसन सृजनात्मक कृतियॉ हैं। प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्णदास और प्रेमघनजी राष्ट्रीय वर्ग में आते हैं तथा अन्य में समाज-सुधार और परिष्कार की भावना अधिक है। सत्य, धर्म, दान,पतिव्रत धर्म आदि के उच्चादर्श उपस्थित किए गए। युगीन एकांकीकारों ने देश-दुर्दशा का चित्रण कर, राष्ट्रीय भावना को जागृत करने का महत्वपूर्ण उद्देश्य सामने रखा।

भारतेन्दु युग के नाटककारों ने विविध नाटकों का हिन्दी में अनुवाद किया। नवीनता की दृष्टि से इस युग के नाट्यकार बंगला नाटकों से लाभ उठाने में भी लगे रहे। तत्कालीन समयानुसार आगा, हश्र, तुलसीदास, शैदा, राधेश्याम, कथावाचक, नारायण प्रसाद 'बेताब', हरिकृष्ण जौहरी आदि का ऐसा दल बना जो पुराणों तथा लीलाओं सम्बन्धी विषयों को ग्रहण कर पारसी रंगमंच के लिए अपनी रचनाएँ प्रस्तुत करने लगे। इस युग में पाश्चात्य तथा पारसी रंगमंच के प्रभावस्वरुप नाटक की आत्मा का मूल सम्बंध प्राचीन भारतीय नाट्य विधान ही रहा उनका दृष्टिकोण समन्वयवादी अधिक रहा। किसी भी क्षेत्र को न उन्होंने पूर्ण त्याग किया और न पूर्ण रुप से अपनाया वरन् वातावरणपरिस्थितियों के अनुरुप उन्होंने कुछ छोड़ा और कुछ ग्रहण किया। इस युग की मूल विशेषताओं को समेटकर श्री रामगोपाल चौहान के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि "जिन्दादिली, भाषा की सरलता, बोलचालपन, मुहावरेदारी तथा व्यंग्यात्मकता इनकी सामान्य विशेषताएँ हैं। उनकी जनजीवन में गहरी पैठ थी, इसलिए वे तिलमिलाकर सचेत व्यंग्य करने मे समर्थ हुए। उनकी यह दृष्टि सचेत थी कि देश की चेतना की धारा को किस ओर मोडना है। लक्ष्य इनका साफ था और उसकी प्राप्ति के लिए सब एक प्राण थे।" अतः परिस्थितियॉ ही कुछ इस प्रकार की थी कि इस युग के एकांकी साहित्य में भावपक्ष की प्रधानता रही तथा उन्होंने कभी भी जागरुक होकर शिल्पविधि को अधिक महत्व प्रदान नहीं किया। इनका मुख्य कारण था कि सामाजिक जीवन को प्राणदान

देना अत्यावश्यक हो गया था तथा समाज के प्रत्येक क्षेत्र को पुनरुत्थान की अपेक्षा थी। एकांकी साहित्य का सृजन देश प्रेम एवं समाज की उन्नति से प्रेरित होकर किया गया है। उपदेशात्मक प्रवृत्ति सर्वत्र पाई जाती है। जो युगीन मांग थी। इस युग की एकांकी रचनाएँ वर्णनात्मकता प्रधान हैं। उनका चरित्र-चित्रण स्थूल है तथा रंगसूचनाएँ बहुत कम हैं। विषय और अभाव की एकता, जिज्ञासा-कौतूहल, चरमसीमा, आकस्मिकता का सहज सौंदर्य इनमें नहीं है। अतः इनका महत्व एकांकी के आरंभिक रुप हिन्दी एकांकी के पूर्वज और परंपरा की दृष्टि से तो है, कला की दृष्टि से नहीं।[67] इस काल के एकांकी केवल 'सुधारक' के मस्तिष्क की विभूति है।

द्विवेदी युग :

द्विवेदी युग हिन्दी एकांकियों के लिए भी संवर्धन-काल था। इस समय देश के राजनीतिक, साजिक और सांस्कृतिक जीवन में अनेक प्रकार के परिवर्तन आने लग थे जिनका प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर पडना नैसर्गिक था। इस युग में, देश में समाज-सुधार, राजनीतिक चेतना और राष्ट्रीय भावना की जो लहर प्रवाहित हुई, उसने हमारे साहित्य के भाव-पक्ष तथा अभिव्यक्ति पक्ष में नवीन फ्रकार की उत्क्रांतियों का संचार किया। डॉ. सुधीन्द्र, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी के अतिरिक्त डॉ. किशोरीनारायण शुक्ल, डॉ. श्री कृष्णलाल, डॉ. भोलानाथ, डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, डॉ. शंभुनाथ सिंह आदि ने 1900 से ही द्विवेदी युग का प्रारंभ माना है।[68] द्विवेदी युग नामकरण से ही स्पष्ट है कि इस युग में किसी प्रवृत्ति विशेष के स्थान पर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक व्यक्तित्व ही केन्द्रीय निदेशक और मूल प्रेरणास्त्रोत था। डॉ. उदयभानु सिंहने भी इसे स्वीकार किया है। उनके अनुसार यहीं से अराजकता-युग का अंत और द्विवेदी युग का प्रारंभ हुआ।[69] यह युग राजनैतिक दृष्टिकोण से संघर्षमय था। लॉर्ड कर्जन द्वारा 13 अक्टूबर सन् 1905 को, बंग-भंग की आज्ञा निकालने के स्वरुप देश में एक महान् क्रांतिकारी लहर उठ खडी हुई। इस दृष्टि से यह युग 'स्वराज्य काल' कहा जा सकता है। फलतः साहित्य भी इस राजनीतिक उथल-पुथल का अपवाद न बन सका,क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण होता है। जैसे राजनीतिक परिस्थितियों के संघर्षमय होने के कारण राजनीतिक क्षेत्र में एक नवीन आंदोलन भड़क उठा था। वैसै ही साहित्यिक क्षेत्र में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के सफल नेतृत्व में भाषा का भी आंदोलन प्रारंभ हो गया। यह काल भावुकता और बुद्धिवाद का संधिकाल माना जाता है। क्योंकि समसामयिक एकांकी साहित्य की उत्पत्ति एवं विकास इन्हीं प्रवृत्तियों के माध्यम से हुआ। कथानक और चरित्र-चित्रण में प्राचीन और नवीन समस्याओं का समावेश हुआ। फिर भी तत्कालीन नाट्य साहित्य में एक विशेष नवीनता पाई जाती है। वह यह कि प्राचीन कथावस्तु को नवीन खड़ी बोली (हिन्दी) के एकांकी साहित्य में उपस्थित किया गया है। फलतः प्राचीनता

के प्रति मोह तथा नवीनता के प्रति अनुराग दोनों ही को प्रचुर मात्रा में आलोच्यकाल की एकांकी विधा अपने में सन्निहित किए हुए हैं।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' नामक पत्रिका के संपादन का कार्यभार संभाला। साहित्य सृजन की अन्य विधाओं की भाँति एकांकी विधा को भी अपनी रचना 'नाट्य शास्त्र' द्वारा मार्गदर्शन करने का प्रयत्न किया। भारतेन्दुजी ने जिस एकांकी-प्रणयन का सूत्रपात किया था वह विवेच्य युग में भी चलता रहा। एकांकी की धारा अविच्छिन्न रुप से चलती रही। इस अंतराल में ऐसी कोई प्रतिभा उदित नहीं हुई जिसने इस क्षेत्र में कुछ नवीनता लाई हो, किन्तु लेखन कार्य बंद नहीं हुआ। वह धीमी गति से चलता रहा। अतः यों कहा जा सकता है कि एकांकी-साहित्य वहीं ठहर गया जहाँ वह भारतेन्दु युग में था। आलोच्य युग में यों तो छुट-पुट रुप से एकांकी रचना होती रही, किन्तु किसी प्रतिभा-सम्पन्न लेखक के अभाव से यह समय नाट्य-सृष्टि के विचार से ठहराव का युग रहा। ठहराव-काल में भी यद्यपि एकांकी लिखे गए किन्तु ऐसी रचना नही हुई जो नाटक-साहित्य के प्रादुर्भाव से दूसरे चरण के मोड का मील स्तम्भ बन सकता है।

विवेच्ययुग में अनिश्चितता समाप्त होने लगी तथा भटकना भी कुछ कम हो गया था और हिन्दी के अपने स्वरुप में एक आकृति उभरने लगी थी। तत्कालीन एकांकी के स्वरुप को डॉ. भोलनाथ ने अपनी सुंदर पंक्तियों में, सजीव ढंग से पिरोते हुए लिखा है कि "निश्चित रुप से इतना ही कह सकते हैं कि भटकना कम हो गया था, अनिश्चितता समाप्त हो रही थी और हिन्दी एकांकी के अपने स्वरुप की - भले ही वह कितनी अनपढ़ क्यों न हो - एक आकृति उभरने लगी थी। उस पर कुछ पारसी रंगमंच की निर्वाणोन्मुखी छाया थी, कुछ संस्कृत नाट्य-शास्त्र की आभा थी, कुछ अंग्रेजी नाटकों के रंग थे और कुछ दर्शकों एवं पाठकों की अपनी परिष्कारोन्मुखी रुचि की भी झलक थी। मगर इन सब रंगों के मिलाने से एकांकियों में हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल एक आकृति का कुछ-कुछ स्पष्ट रुप उभरने लगा था।"[70] द्विवेदी युग में आते-आते हिन्दी एकांकी के स्वरुप पर पाश्चात्य एकांकी का भी प्रभाव पडने लगा। उसका परिणाम यह हुआ कि एकांकी विधा के बाहरी रुप में क्रमशः थोडा-थोडा अंतर आया जो स्वाभाविक है। परन्तु इसके बावजूद कि पाश्चात्य-सभ्यता का मुलम्मा हिन्दी एकांकी के बाह्य रुप को अपने आवरण में समेटे हुआ था, उसकी मूल आत्मा भारतेन्दु युग के अनुसार ही रही। डॉ. रामचरण महेन्द्र के शब्द उल्लेखनीय हैं, "अंग्रेजी नाटकों से हमारे साहित्यकार प्रभावित हुए, कहीं-कहीं कुछ दृष्टियों से वे आदर्श अपनाये भी गए, किन्तु मूल प्रेरणा उन्हें प्राचीन संस्कृत-साहित्य से ही मिलती रही। द्विवेदी युग में अंग्रेजी का प्रभाव स्पष्टतः प्रकट होने लगता है और अंग्रेजी नाट्यशैली के नवीन आदर्शो को हमारे साहित्यकार अपनाते हुए मिलते हैं।"[71]

इस युग के प्रमुख एकांकीकारों में पण्डित राधेश्याम कथावाचक, पण्डित तुलसीदास शैदा, श्री मंगलाप्रसाद विश्वकर्मा 'विशारद', सियाराम शरण गुप्त, ब्रजलाल शास्त्री, बदरीनाथ भट्ट, श्री कामताप्रसाद गुरु, श्री चंडीप्रसाद हृदयेश, जी.पी श्रीवास्तव, प्रेमचंद्र, रामनरेश त्रिपाठी, बेचेन शर्मा उग्र, प्रेमचंद, श्री सुदर्शन, श्री जयशंकर प्रसाद आदि।

पं राधेश्याम कथावाचक जी ने 'कृष्ण-सुदामा', 'भारत माता', 'शांति के दूत', 'भगवान कृष्ण', 'घंटापंथ' और 'सेवक के रुप में श्रीकृष्ण' आदि एकांकियों की रचना की। सभी का कथानक पौराणिक है। सभी एकांकियों में शेर, दोहा, पद्यात्मक संवाद स्थान-स्थान पर अधिकता से पिरोए गए हैं। इस तरह आपने पारसी रंगमंच पर, हिन्दी एकांकियों को प्रवेश कराकर एक युगान्तकारी कार्य किया जो हिन्दी एकांकी के रंगमंच की पूर्व पीठिका भी तैयार करता है। पंडित तुलसीदास शैदा का प्रतिनिधि एकांकी 'लज्जा' है जिसमें समाज-सुधार की वृत्ति स्पष्ट है। नग्न यथार्थवाद में अनुभूति की तीव्रता आपकी विशेषता है। 'विशारद' जी प्रधानतः ऐतिहासिक विषयों पर लिखते रहे हैं। आपका प्रतिनिधि एकांकी 'शेरसिंह' - 'प्रभा' में (1923) प्रकाशित हुआ था। 'कृष्णा' ऐतिहासिक आदर्शवादी अतुकान्त छंदों में लिखा हुआ गीतिनाट्य है। इस रचना से गीति एकांकी के विकास पर प्रकाश पडता है। काव्य में होते हुए भी गुप्तजी ने अपने कथोपकथन को सजीव और मर्मस्पर्शी बना दिया है। ब्रजलालजी शास्त्रीजी ने मुख्यतः ऐतिहासिक एकांकियों का सर्जन किया। आपके दस एकांकी, जालंधर से प्रकाशित 'भारती' में (1920-21 में) प्रकाशित हुए थे। 'नीला', 'दुर्गावती', 'पद्मिनी', 'तीन छत्राणियों से', 'पन्ना', 'तारा', 'कपल', 'पद्मा', 'कोडमदेवी', 'किरणदेवी' आदि हैं। शास्त्रीजी पाश्चात्य एकांकीकारों से प्रभावित हैं। मुख्य भाव वीरता, प्राचीन भारतीय गौरव और राष्ट्रवाद है। वाणी में आवेश और अभिव्यंजना में शौर्य सम्बंधी भावुकता की प्रधानता है। वास्तव में ये संवादप्रधान छोटी-छोटी एकांकी रचनाएँ हैं। बदरीनाथ भट्ट जी इस युग के प्रमुख स्तंभ हैं। इन्होंने हास्य-व्यंग्य प्रधान नाटककारों को एक नवीन दिशा दी है, नया मोड दिया। एकांकी की रचना द्वारा नए आदर्श उपस्थित किए। 'पुराने हकीम साहब का नया नौकर', 'हिन्दी की खींचातानी', 'ठाकुर दानी सिंह साहब', 'रेगड़ समाचार के एडीटर की धूल दच्छना', 'धोंधा संत विद्यार्थी', 'आयुर्वेद कसेरु', 'युंगी की उम्मेदवारी या मेम्बरी की धूम' आदि आते हैं। आपके प्रहसनों में 'मिस अमेरिकन', 'विवाह विज्ञापन', और 'चुंगी की उम्मीदवारी' आदि आते हैं। इनमें 'चुंगी की उम्मीदवारी' आपका उत्तम प्रहसन है। इसमें हास्य, हास्यसृजन परिस्थितियों एवं प्रसंगों की स्वाभावाविक उद्भावना की गई है। इसके अन्तर्गत मंगलाचरण तथा सूत्रधार का प्रयोग भी हास्य-रस निष्पति के लिए किया गया है। सामाजिक

व्यंग्य का सजीव चित्र और शिष्ट रुप हिन्दी नाट्य-साहित्य को प्रदान करने का श्रेय भट्टजी को जाता है। सामाजिक नाटकों की नींव इनसे पडी। शिष्ट और सुरुचिपूर्ण हास्य इनकी सबसे बडी सफलता है। जी.पी. श्रीवास्तवजी ने दो प्रकार के एकांकियों की रचना की। मोलियर के प्रहसनों से अनुदित आपके प्रहसनों में 'ऑखों में धूल', 'धोखाधडी', 'नाक में दम', 'मार-मार कर हकीम' आदि हैं। 'दुमदार आदमी', 'मिट्टी का शेर', 'कुर्सीमैन', 'पत्र-पत्रिका सम्मेलन', 'बँटाधार', 'घर का न घाट का', 'बौछार', 'हाकिम या पैदायशी', 'मजिस्ट्रेट', 'हजामत', 'भूल-चूक', 'चोर के घर छिछोर', 'लक्कड़बघ्घा' और 'मिरिचानन्द' आदि आपके मौलिक प्रहसन मिलते हैं। आपके एकांकियों में ट्रेजडी और कॉमेडी दोनों को साथ रखा गया है। पण्डित राम नरेश त्रिपाठी जी की एकांकियों में 'समानाधिकार', 'स्त्रियों की कौंसिल' (सामाजिक एकांकी), 'नख-शिख', 'कवि और छायावादी कवि और चित्रकार' इनके श्रृंगार विरोधी सामाजिक एकांकी हैं। 'कुणाल' ऐतिहासिक एकांकी है। 'बा और बापू' राष्ट्र प्रेम से ओत-प्रोत राष्ट्रीय ऐतिहासिक एकांकी है। 'मंगल-मंदिर', 'कर्तव्य-पालन', 'ध्रुव', 'एकलव्य', 'इन्द्र का अखाडा', 'नाना-नानी' और 'मौत के सिपाही' बाल एकांकी हैं तथा 'सीजन डल है' इनका एक प्रहसन है। आपके एकांकियों में भारतीय संस्कृति का सच्चा प्रदर्शन हुआ है। नैतिक दृष्टिकोण से स्वस्थ नागरिकों का निर्माण साहित्यिक सुरुचि, अश्लीलता एवं श्रृंगार के दूषित वातावरण के विरुद्ध मोर्चा, अति आधुनिकता तथा पाश्चात्य शिक्षा पर व्यंग्य आदि आपके एकांकियों की कुछ विशेषताएँ हैं। आदर्शवाद की प्रतिष्ठा के साथ त्रिपाठी जी के नाट्य-साहित्य की सबसे बडी विशेषता यह है कि उसमें सिद्धान्त वाक्य नहीं आये हैं। 'अफ़जलवध', 'उजबक', 'चार बेचारे', 'भाई मियॉ', आदि बेचेन शर्मा उग्र की उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। 'अफजलवध' और 'लाल व क्रांति' आपके राजनीतिक एकांकी हैं। 'चार बेचारे' संग्रह में चार एकांकियाँ संग्रहित हैं। 'बेचारा सम्पादक', 'बेचारा अध्यापक', 'बेचारा सुधारक' और 'बेचारा प्रचारक'। चारों एकांकियाँ व्यंग्य प्रधान सामाजिक हैं। आपकी अन्य एकांकी - 'सीता हरण', 'बलिदान', 'लाल क्रांति के पंजे में' आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। उग्र जी के एकांकियों में भाषा की सरलता, कथानक की रोचकता और अभिनय की सुविधा के साथ व्यंग्य का तीखापन है। आपके एकांकियों पर पारसी रंगमंच की छाप है। प्रेमचंदजी की एक मौलिक और एक अनुवादित एकांकी मिलती है। 'प्रेम की बेदी' आपकी एक मौलिक एकांकी है और 'सृष्टि का आरंभ' जार्ज बर्नाड शॉ के 'बैक टू मैथ्यूसल' के प्रथम भाग का अनुवाद है। प्रेमचंदजी पुरानी पाटी के एकांकीकार हैं।

प्रत्येक युग की अपनी-अपनी अलग-अलग समस्याएँ होती है, सीमायें होती है, लेकिन उन समस्याओं का उतना महत्व नहीं होता है, जितना की उनमें किये गए कार्य का होता है। उसी प्रकार द्विवेदी युगीन परिस्थितियों में जिन समस्याओं को लेकर जिन सीमाओं में एकांकियों की सृष्टि हुई , वह विचारणीय

तथ्य है। फलतः ये रचनाएँ समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक दशाओं के परिचायक हैं। इनमें हमारे समाज की जर्जरित रुढ़ियों और विकृतियों तथा राजनीतिक जीवन की विद्रुपताओं तथा नमोन्मेष की परिस्थितियाँ जो हमारे तत्कालीन जीवन में यथावत बैठ नही पा रही थी। उनका बड़ा ही यथार्थ एवं सजीव ढंग से चित्रण किया गया है। इस तरह उपदेशात्मक और सुधारवादी जीवन-दृष्टि का प्रभाव युगीन एकांकी साहित्य पर परिलक्षित होता है। अतएव द्विवेदीजी का प्रभाव युगीन एकांकीकारों की कृतियों में मुख्यतः परिलक्षित होता है। तत्कालीन एकांकीकारोंने समसामयिक परिस्थितियों का यथातथ्य चित्रण कर राष्ट्रीयता का सर्वोपरि आसन पर प्रतिष्ठित किया। द्विवेदी युगीन एकांकीकारों ने राष्ट्रीय चेतना के निमित्त धर्म और सामाजिकता की पुनर्स्थापना के प्रयास किये। फलस्वरुप समानता, बन्धुत्व, नारी के प्रति श्रद्धामय दृष्टिकोण आदि की पुनर्स्थापना का आन्दोलन जारी रहा। एकांकीकारों ने निरंतर संघर्षशील रहकर सामाजिक न्याय के लिये निजी अनुभूतियों का बलिदान लोक-कल्याण की भावना से किया। अतीत का गौरव स्मरण कराते हुए वर्तमान की हीनावस्था पर दुःख प्रकट हुए। समसामयिक लेखकों ने युग को बार-बार राष्ट्रीयता का उद्बबोधन प्रदान किया। इस प्रकार द्विवेदी युग जातीयता तथा आर्य भावना का प्राचुर्य लेकर आया। अन्ततोगत्वा द्विवेदी-युगीन साहित्य राष्ट्र-प्रेम एवं लोकमंगल की भावना का विधायक बना। फलतः साहित्य में अनुशासित तथा मर्यादित अनुभूतियों के प्रकाशन पर बल दिया गया। फलस्वरुप राष्ट्रीयता को प्राथमिकता मिली। राष्ट्रीय चेतना का परिचय सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक सभी एकांकियों में परिलक्षित होता है। श्री बदरीनाथ भट्ट की 'मिसेज अमेरिकन' इसी चेतना से अनुप्राणित है। इसमें सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य करते हुए पुनरुत्थान के सुझाव है। उग्रजी-'चार बेचारे' नामक संकलन के 'बेचारा अध्यापक' तथा 'बेचारा सुधारक' प्रहसन में क्रमशः राष्ट्रीय चेतना एवं गांधीवादी जीवन-दर्शन का प्रतिपादन करते हैं। लेखक का मुख्य प्रयोजन पुनरुत्थान की भावना तथा लोकमंगल की कामना है। श्री जी.पी. श्रीवास्तव ने प्रहसन लिखकर समाज में राष्ट्रीय चेतना जागृत करके पुनरुत्थान की भावना का प्रतिपादन किया। श्रीवास्तवजी का 'दुमदार आदमी' एक सर्वश्रेष्ठ कृति है जो वकीलों पर एक तीखा कटाक्ष है। रामनरेश त्रिपाठी द्विवेदी युगीन एकांकीकारों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

इस समय में प्रहसनात्मक एकांकियों की विशेष रचना हुई। एकांकी शब्द का प्रयोग भी इसी उत्थान के समय में हुआ। सुखान्त और दुखान्त दोनों प्रकार के एकांकी लिखे गए। इस युग के एकांकी टेकनीक में पहले युग की अपेक्षा कुछ विकास हुआ। सस्कृत की नान्दी, प्रस्तावना, भरत वाक्य इत्यादि रुढियाँ समाप्त हुई तथा पाश्चात्य नाटकों की शैली का प्रभाव बढने लगा। दृश्यों की संख्या अधिक रही। नाट्यकारों की दृष्टि मूल समस्या के स्पष्टीकरण और अंतिम प्रभाव छोडने पर मुख्यतः रही। संगीत, स्वगत

और पारसी प्रणाली की दोहा-शेर-पद्धति से एकांकी मुक्त न हो सके। गद्य और पद्य का व्यवहार बना रहा। भाषा अलंकृत ही रही। कथोपकथनों में हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, आदि सभी का सम्मिश्रण है। पं. राधेश्याम कथावाचक, शैदा आदि कुछ एकांकीकारों ने उर्दू शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया है। रंग-संकेत के क्षेत्र में भी कुछ परिवर्तन हुआ।

पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी नाट्यकला के विकास की दृष्टि से अनुवादों का होना आवश्यक समझते थे। अतः द्विवेदीयुग में अनूदित नाटकों तथा एकांकियों की गतिविधि जारी रही थी, परंतु संस्कृत के नाटकों का अनुवाद कुछ कम हुए और बगला, अंग्रेजी से अधिक अनुवादित हुए। इस युग के अनुवादकों में मूल भावों को ज्यों का त्यों रखने की ओर साहित्यकारों की दृष्टि विशेष रुप से थी क्योकि अब तक हिन्दी आधुनिकता की दृष्टि से पर्यात विकसित हो चुकी थी। जी.पी. श्रीवास्तव जी ने मौलियर की कई रचनाओं, नाटकों, तथा एकांकियों को हिन्दी में रुपायित किया। इसी प्रकार अन्य कई रचनाकारों ने भी यूरोप के एकांकी नाट्य साहित्य आदि से हिन्दी रुपान्तरण किया। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि द्विवेदी युग पर पाश्चात्य प्रभाव था यद्यपि एकांकीकारों ने परंपरा से आती हुई रुढियों को तोडने का प्रयत्न तो किया, किन्तु पूर्ण रुपेण वे इस कार्य में सफल नहीं हो सके।

प्रसाद युग :-

एकांकी के विकास में अगला चरण प्रसाद युग का है। द्विवेदी युग के पश्चात हिन्दी एकांकियों ने जिस रुप में विकास किया है, उस पर पाश्चात्य एकांकियों की छाया पूर्ण-रुपेण प्रतिबिम्बित है। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अंग्रेजी साहित्य में जिस प्रकार की क्रांति तत्कालीन लेखकों ने की थी उसका प्रभाव कालान्तर में वहॉ के एकांकीकारों पर भी पड़ा और वही प्रभाव धीमे-धीमे हिन्दी प्रदेश पर भी अपना रंग जमाने लगा। हिन्दी साहित्य में प्रसाद एक बहुत बड़ा नाम है। प्रसाद का विराट व्यक्तित्व अपने आप में एक साहित्यिक संस्थान जैसा है। उनके जैसी प्रखर और बहुमुखी प्रतिभा बहुत कम साहित्यकारों में देखने को मिलती है, और इस दृष्टि से वे विश्व के कुछ गिने-चुने साहित्य-कर्मियों की शीर्षपंक्ति में स्थान रखते हैं। उन्होने न केवल हिन्दी की समस्त प्रचलित साहित्य-विधाओं की सर्जना की, वरन् उनके विशिष्ट रचनात्मक कीर्तिमान भी स्थापित किये और सर्जन के अनेकानेक नये आयाम भी प्रस्तुत किये। वे ऐसे साहित्यसृष्टा हैं जिन्हे छूकर इतिहास का प्रवाह यों ही आगे नहीं बढ जाता प्रत्युत् जिनके पास रुककर उसे नवीन जीवन-सामग्री को आत्मसात् करना होता है। मूलतः वे कवि थे और एक समूचा काव्य युग उनसे प्रेरित और प्रवर्तित हुआ है। किन्तु, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि के क्षेत्रों में भी उनका कम योगदान नहीं। हर विधा मे उन्होंने नये अध्याय जोडे और युगपुरुष के दायित्व का वहन करते हुए उसके नवयुग की नींव

रखी। नाटक के क्षेत्र में उनका प्रदेय महान् एवं सर्वतोमुखी है। उन्हें हिन्दी के साहित्यिक नाटकों का प्रथम रचनाकार कहा जा सकता है। आपने हिन्दी नाटक में सांस्कृतिक अभिरुचि और बौद्धिकता का अभिनिवेश किया। अतः आपका आविर्भाव हिन्दी नाटक के कथ्य और रंगशिल्प दोनों ही क्षेत्रों में एक साहित्यिक क्रांति का समारम्भ करता है।

जयशंकर प्रसादजी के बहुमुखी व्यक्तित्व ने नाटक की परंपरा को एक नए रुप के साथ विकसित किया। हिन्दी नाट्य क्षेत्र में प्रसादजी का आगमन नाटक के विकास में सर्वथा नवीन अध्याय को जोड़ने वाला है। आधुनिक युग मे नाटक के विकास का श्रेय प्रसाद जी को दिया जाता है। एक प्रकार से इस युग को स्वर्ण-युग कहा जा सकता है। नाटक के विकास के साथ ही साथ एकांकियों के पुर्नरुत्थान का भी यह युग था। प्रसादजी का युग भारतीय इतिहास में संक्रमणकालीन परिस्थितियों का काल था जिनमें पुनर्जागरण और आधुनिकता दोनों सन्निहित थे। परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि ब्रिटीश-साम्राज्य की गुलामी से मुक्त होने के लिए देश-व्यापी आन्दोलन जोर-शोर से पनप रहे थे। एक ओर देश के प्राचीन ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक गौरव के संस्मरण द्वारा जन-जन में नयी चेतना उद्भूत हो रही थी तो दूसरी ओर विदेशी प्रभाव से राष्ट्रीय चेतना जागृत हो रही थी। प्रसादजी ने भारत के स्वर्णिम इतिहास के पृष्ठों को उजागर करते हुए समकालीन समस्याओं के निराकरण की एक नयी दिशा के द्वार खोल दिए। उन्होंने स्वयं लिखा है कि "इतिहास का अनुशीलन किसी भी जाति को अपना आदर्श संगठित करने के लिए अत्यंत लाभदायक होता है।..... क्योंकि हमारी गिरी दशा को उठाने के लिए हमारे जलवायु के अनुकूल जो हमारी सभ्यता है उससे बढकर उपयुक्त कोई भी आदर्श हमारे अनुकूल नहीं होगा कि नहीं, इसमें हमें पूर्ण संदेह है.... मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अशं से उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन कराने को है जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थिति को बनाने में बहुत कुछ प्रयत्न किया है।"[72] प्रसादजी की रचनाओं में अतीत के गौरव-गान के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान का अद्भूत समन्वय पाया जाता है। प्रसादजी मूलतः कवि रहे हैं अतः उनके एकांकी-नाटकों में कवि हृदय का प्रभाव भी अवश्य देखा जा सकता है। जीवन-व्याख्या की प्रेरक विचारधारा का समावेश और कवित्व का यह ग्रहण भी प्रसादजी की एक नवीन व मौलिक जीवन दृष्टि से प्रेरित व प्रभावित है।

एकांकी नाटक के क्षेत्र मे प्रसादजी की उल्लेखनीय देन - नयी नाट्यशैली के विकास की है। उन्होंने देश की प्राचीन संस्कृति से विकसित भारतीय नाट्य-शैली के साथ-साथ पाश्चात्य नाट्यशैली का अद्भुत समन्वय किया। नाटक मे मुख्य रुप से प्रसादजी की विशेषता है - संघर्ष के समन्वय की। प्रसादजी

राजनैतिक संघर्ष के युग में जीते थे। अतः उनकी कथावस्तु में राजनैतिक संघर्ष का प्रतिपादन सहज ही पाया जाता है। लेकिन प्रसादजी की महत्ता है कि उन्होंने बाह्य संघर्ष के साथ-साथ पाश्चात्य शैली के अनुरुप मानसिक संघर्ष का भी यथा-स्थान सुंदर निरुपण किया है। यह संघर्ष प्रमुख पात्रों में भी निरुपित है। तथा गौण पात्रों में भी पाया जा सकता है। उदाहरणतः ध्रवस्वामिनी के प्रमुख पात्रों के रुप में ध्रवस्वामिनी और चन्द्रगुप्त का अन्तर्द्वन्द्व देखा जा सकता है। कथावस्तु के क्षेत्र मे प्रसादजी का क्रांतिकारी प्रयास हिन्दी एकांकी को ऐतिहासिक तथ्य की ओर अग्रसर करने में नीहित है। यद्यपि उनका मुख्य क्षेत्र ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधृत है, तथापि दार्शननिक एवं सांस्कृतिक विषय को लेकर मानव की देशकाल निरपेक्ष मूल अभिवृत्तियों का प्रतिपादन भी उनकी एकांकियों में उपलब्ध होता है।

प्रसादजी के एकांकी साहित्य का सबसे प्रबल स्वर राष्ट्रीय चेतना का है। अपनी एकांकियों में नीहित समसामयिक समस्याओं में प्रसादजी ने सर्वाधिक समय राष्ट्रीय समस्याओं के विभिन्न स्वरुपों पर दिया है। विदेश शक्ति से आक्रांत, राष्ट्र के संघर्ष के चित्रण के साथ आंतरिक विग्रहों में बिखरे हुए राष्ट्र की विपन्न परिस्थितियों को उन्होंने प्रस्तुत किया है। उनकी वास्तविक शक्ति सांस्कृतिक है।[73]

प्रसादजी ने राष्ट्रीय जीवन से सम्बंधित समस्याओं का जो समाधान प्रस्तुत किया है वह बुधिगम्य होने के साथ ही साथ हमारे हृदयगत संस्कारों को स्पर्श करने के कारण भावोद्रिक करने में भी समर्थ है। आपने राष्ट्रीयता का विनाशकारी रुप ग्रहण न करके उसे विश्व-शांति का माध्यम बनाया है।[74] संभवतः इन्हीं सभी कारणों से उन्होंने पारसी रंगमंच की मनोरंजनात्मक नाट्य शैली से हटक स्वस्थ एवं स्तरीय मनोरंजन के लिए आधुनिक समस्याओं के संदर्भ में - भारतीय सांस्कृतिक गौरव गाथाओं को यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक रुप देने का भगीरथ प्रयत्न किया।[75]

आधुनिक हिन्दी एकांकी के आविष्कर्ता के रुप में प्रसादजी का योगदान परिलक्षित होता है। एकांकी की दिशा में निर्दिशायामी प्रयोग सबसे पहले इन्हीं ने किया। अपने प्रारंभिक एकांकी-साहित्य में प्रसादजी ने द्विवेदी-युगीन मूल्यों का प्रतिपादन किया है। हिन्दी एकांकी को नवीनता की ओर अग्रसर करने मे प्रसादजी की महत्ता सर्वोपरि है। आपकी प्रसिद्ध एकांकियाँ हैं - 'सज्जन', 'प्रायश्चित', 'करुणालय', 'कल्याणी-परिणय' तथा 'एक घूँट' है। प्रसादजी की एकांकी के विकास में अध्ययन की दृष्टि से ये महत्वपूर्ण कड़ियाँ हैं। प्रथमावस्था में ही आपके एकांकियों मे कलात्मक प्रयास दृष्टिगत होते हैं। "विशाख" नाटक के पश्चात् धीरे-धीरे उनमें एक ही प्रकार की शैलियाँ और विचार-पद्धति के विकास और परिपक्वता के

उपकरण मिलते हैं।[76] 'सज्जन' प्रसादजी की प्रथम मौलिक एकांकी है। यह भारतेन्दु युग में प्रचलित पौराणिक शैली पर आधारित महाभारत के कथानक से सम्बंधित है। इसमें धर्मराज युधिष्ठिर की उदारता एवम् धर्म की जय की कथावस्तु तथा तत्सम्बंधी कथोपकथन प्राप्त है। भारतेन्दुजी की भाँति प्रसादजी ने इसमें गद्य में खडी बोली का प्रयोग किया है। लेकिन पद्यों में ब्रजभाषा का व्यवहार है। इससे प्रामाणित है कि प्रसादजी की प्रथम कृति भारतेन्दु की हरिश्चंद्र परंपरा को अपने साथ लेकर चली। दूसरी एकांकी 'प्रायश्चित' का कथानक पृथ्वीराज के साथ हुए यवनों के सघर्ष से सम्बंधित है। लेखक ने इसमें जयचंद की आत्मग्लानि निरुपित करके उसे सांस्कृतिक स्वरुप प्रदान गिया है। जयचंद की मृत्यु की घटना को लेखक ने इतिहास से भिन्न रुप में प्रस्तुत किया है। इसमें नान्दी की सूत्रधार शैली का परित्याग किया गया है। संवाद योजना में भी बदलाव नजर आता है। प्रसाद के नाटकों में यहीं से पद्यात्मक कथोपकथन का पूर्णतया तिरोभाव हो गया है। आपने अपनी 'प्रायश्चित' एकांकी में आकाशभाषित और पात्रों की भाषा में सामाजिक स्थिति के अनुकूल परिवर्तन जैसे दो नवीन परीक्षण किये हैं। प्रसादजी की प्रारंभिक एकांकियों की यह विशेषता है कि उन्होंने विदेशियों से पूर्ण असहयोग तथा उनके आक्रमणों का मूँहतोड उत्तर देने की प्रवृत्ति दिखाई है। इस कारण से उन्होंने देश-द्रोह के निमित्त जयचन्द से प्रायश्चित करवाया है। आपने अंग्रेजी-साहित्य से प्रभावित होकर 'करुणालय' नामक गीति-एकांकी की सृष्टि की है। इसमें हरिश्चंद्र की कर्तव्य-भावना और पुत्र-प्रेम के बीच शिथिल संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है।

प्रसादजी ने सन् 1929 में 'एक घूँट' नामक एक सफल एकांकी की रचना की। एकांकी के विकास में 'एक घूँट' अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है। 'एक घूँट' को आधुनिक एकांमकी प्रवर्तक कृति कहा जा सकता है। यह आधुनिक एकांकी के निकट है। कथ्य की दृष्टि से इसे हिन्दी का पहला 'थीसिस प्ले' कह सकते हैं, जिसमें गोष्ठीनुमा बौद्धिक बहस का वातावरण प्रधान होता है। डॉ. रामचरण महेन्द्र के मतानुसार नई शैली की वास्तविक हिन्दी एकांकी का प्रारंभ 'एक घूँट' से हुआ है। कुछ समालोचकों ने इसे हिन्दी का प्रथम एकांकी घोषित किया है।[77] डॉ. नगेन्द्र के अनुसार 'एकांकी टेकनीक' का 'एक घूँट' में पूरा निर्वाह है। उक्त मत के समर्थक डॉ. सत्येन्द्र का कथन है कि इसमें संस्कृत से कुछ भी नहीं लिया गया, यह निर्विवाद है।[78] अब तो प्रायः सर्व सम्मति से यह एकांकी नाटको मे परिगणित किया जाता है।[79] आज तो कुछ लोगों की धारणा ही बन गई है कि हिन्दी का सर्वप्रथम एकांकी नाटक 'एक घूँट' ही है। प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने संपूर्ण टेकनीक के निर्वाह के कारण इसे सफल एकांकी कहा है।[80] कतिपय विद्वानों ने प्रसाद जी को ही एकांकी का जन्मदाता माना है। डॉ. सत्येन्द्र जी के अनुसार यह रचना हिन्दी एकांकियों के विकास की द्वितीय व्यवस्था की अग्रणी है।[81] डॉ. दशरथ ओझा के अनुसार 'एक घूँट' नामक एकांकी उसी परंपरा में है

जो तेरहवीं शताब्दी में जन्म लेकर क्रमशः परिपुष्ट होती रही है और देश-कालानुसार परिस्थिति के अनुकूल वेश धारण करती हुई प्रसाद के समय नितान्त नवीन रुप में प्रकट हुई। यह मूलतः समस्यामूलक एकांकी है। इसमें स्त्री और पुरुष के दाम्पत्य जीवन की समस्या का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण किया गया है। इसमें तीन कथाओं को एक साथ सूत्रबद्ध किया गया है। रसाल और वनलता, आनन्द और प्रेमलता, झाड़ूवाला और उसकी पत्नी। रसाल और वनलता प्रमुख पात्र हैं। फ्रायड के प्रभाव के प्रतिफलनस्वरुप प्रसाद जी ने 'एक घूँट' में मनोविश्लेषणात्मक जीवन दर्शन को मुख्यतः प्रतिपादित किया है। इसे प्रसादजी के निजी अन्तर्द्वन्द्व का प्रतीकात्मक रुप माना गया है।[82] डॉ जगन्नाथ शर्मा इसे अन्यापदेशिक नाटक मानते हैं।[83] 'एक घूँट' मे पात्रों के चारित्रिक घात-प्रतिघात, चरित्र विकास, कार्य-व्यापार के घनत्व और सक्रियता का अभाव है। यद्यपि इसमें नैपथ्य विधान, रंगसंकेत एवं गीत आदि की योजना प्रसादजी ने की है तथापि कार्य-व्यापार के द्वन्द्व और पात्रों के मनोद्वन्द्व की गहन स्थितियाँ यहाँ उभर नहीं सकी हैं। 'एक घूँट' शॉ और इब्सन के बुद्धिवादी नाटकों से प्रभावित है।[84] यह रचना वैचारिकता से बोझिल है। इसीलिए दृश्य सज्जा एवं अभिनय सम्बंधी पर्याप्त रंगसंकेतों के होने पर भी इसमें नाटकीयता का अभाव है। यहाँ व्यंग्य विनोद की योजना के बावजूद कार्य-व्यापार की कमी है। इसीलिए घटनाओं में आरोह-अवरोह, स्थितियों में घनत्व और तनाव नहीं है। अतः 'एक घूँट' में रंगमंचीयता प्राप्त नहीं होती।[85]

हिन्दी एकांकी के विकास में सन् 1930 के आस-पास का युग प्रयोगों का युग कहा जा सकता है। उस युग के एकांकीकारों ने पाश्चात्य एकांकी के अनुवाद एवं अनुकरण के आधार पर अंग्रेजी टेकनीक का अध्ययन कर एकांकी क्षेत्र में नए प्रयोग किये। कुछ एकांकीकारों ने संस्कृत की प्राचीन परिपाटी का निर्वाह किया तथा कुछ एकांकीकार हिन्दी के पारसी रंगमंच की पद्धति के आधार पर एकांकियों की रचना करते रहे। इस युग में प्रसाद के भावात्मक एकांकियों की परंपरा में बहुत कम एकांकीकार दिखाई देते हैं। विषय की दृष्टि से इस युग की एकांकियाँ ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकांकियों की रचनाएँ हुई।

प्रसादजी के उपरान्त इस युग के प्रसिद्ध और प्रतिभासम्पन्न एकांकीकारों में सुदर्शन जी का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। आपने संस्कृति के रुपक और उपरुपकों की प्राचीन परंपरा की लीक को त्यागकर नवीनता का रुप अपने एकांकियों में प्रस्तुत करते हैं। आपकी प्रमुख एकांकियाँ हैं - 'जब आँखें खुलती हैं', 'आनरेरी मजिस्ट्रेट', 'राजपूत की हार' और 'छाया' आदि हैं। संस्कृत की प्रहसन परंपरा के आधार पर लिखी गई 'आनरेरी मजिस्ट्रेट' सुदर्शनजी की सशक्त रचना है। लेखक ने इसमें पात्रों के द्वारा शब्दों को विकृत करके उच्चरित करवाया है। परिणामस्वरुप यह रचना हास्यरस से परिपूर्ण है। सुदर्शनजी की प्रारंभिक रचनाओं में 'जब आँखें खुलती हैं' का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है। लेखक ने स्वाधीनता संग्राम

की पृष्ठभूमि पर वेश्या उद्धार की सामाजिक समस्या को मुख्य रुप से उभारा है। यह रचना तीन दृश्यों में वर्णित है तथा परंपरागत पद्धति में रचित है। 'राजपूत की हार' सुदर्शन जी की ऐतिहासिक एकांकी है। इसमें जोधपुर के राणा और उनकी पत्नी की कथावस्तु निरुपित है। माता और पत्नी के मानसिक संघर्ष को अंकित करते हुए लेखक ने प्रसादजी की नई शैली का निरुपण किया है। आपकी सभी रचनाओं में 'छाया' नामक एकांकी सर्वाधिक सशक्त कृति मानी गई है। इसमें चन्द्रगुप्त और छाया के प्रेम को आधार बनाकर ऐतिहासिक कथानक वर्णित किया गया है। सर्वथा परंपरामुक्त होकर नवीन दिशा की ओर संकेत करने वाले एकांकियों की श्रेणी में मुख्यतः 'राजपूत की हार' और 'छाया' एकांकी को रखा जा सकता है।

हिन्दी एकांकियों के विकास में प्रसादजी के पश्चात डॉ. रामकुमार वर्मा का योगदान सराहनीय है। उन्होंने हिन्दी एकांकी के कतिपय नवीन प्रयोग किये हैं। जिसके आधार पर हिन्दी एकांकी प्रगतिशीलता के राह पर आगे बढती हुई प्रतीत होती है। वर्माजी की एकांकियाँ विभिन्न प्रकार की हैं। कुछ सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, धार्मिक एवं हास्यमूलक एकांकियाँ भी उन्होंने लिखी हैं। शिल्प की दृष्टि से वर्माजी की एकांकियाँ पाश्चात्य एकांकियों के समक्ष ही कही जा सकती है। वर्माजी ने पात्रलेखन में शारीरिक विलक्षणता का यथार्थ चित्रण करते हुए उन्हें आदर्शोन्मुख अंत देकर अपनी विशेषता स्थापित की है। वर्माजी के एकांकी साहित्य लगभग 100 के आसपास हैं। उनके प्रमुख एकांकी संग्रह के नाम निम्नलिखित हैं। 'पृथ्वीराज की आँखें', 'रेशमी टाई', 'चारुमित्रा', 'विभूति', 'सप्तकिरण', 'रुपरंग', 'रजतरश्मि', 'दीपदान', 'ऋतुराज', 'रिमझिम', 'इन्द्रधनुष', 'पाँचजन्य', 'कौमुदी महोत्सव', 'ध्रवतारिका', 'जूहि के फूल', 'कामकंदला', 'बापू' आदि। आपकी प्रमुख ऐतिहासिक एकांकियाँ हैं - 'पृथ्वीराज की ऑखें', 'चारुमित्रा', 'कौमुदी महोत्सव', 'औरंगजेब की आखिरी रात', 'दीपदान', 'शिवाजी', 'कदम्ब या विष', 'बापू' आदि टेकनीक की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। डॉ. वर्मा ऐतिहासिक कथावस्तु द्वारा तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को अपनी सजीवता, प्रभावात्मकता एवं गहनता से प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त हैं। अपनी ऐतिहासिक कथायोजन में उन्होंने लोककल्याण के उद्देश्य को भारतीय आदर्श एवं संस्कृति के द्वारा उजागर किया है। उनकी ऐतिहासिक एकांकी साहित्यिक एवं रंगमंचीय एकांकी का समन्वित रुप है। इसमें जयशंकर प्रसाद के नाटकों जैसी गंभीरता एवं सूक्ष्मता नहीं है और न ही पारसी नाटकों जैसी उच्छृंखलता है। "एकांकियों में गीतों का प्रयोग, तकिया कलाम की योजना, पात्रों की मनोदशा, कथानक का मोड, रंगमंचीय संकेत, संवादात्मक कुशलता इन्हें अचानक प्राचीनता की पंक्ति से उठाकर आधुनिकता की पंक्ति में बैठा देते हैं।"[86] आपकी प्रमुख सामाजिक एवं पौराणिक एकांकियों में 'रेशमी टाई', '18 जुलाई की शाम', 'एक्ट्रेस', 'उत्सर्ग', 'एक तोले अफीम की कीमत', 'कलाकार का सत्य', 'चंपक', 'दस मिनट',

'नहीं का रहस्य', 'परीक्षा', 'बादल की मृत्यु', 'रजनी की रात', 'रुप की बीमारी', 'अंधकार', 'नारी की वैज्ञानिक परीक्षा', 'राजरानी सीता', 'छोटी सी बात', 'भरत का भाग्य' आदि हैं। आपकी सामाजिक एकांकियों की कथावस्तु समांतर कहानियों की तरह आम जनता की समस्याओं से सम्मुक्त हैं तथा इनकी कथावस्तु शिक्षित मध्यवर्गीय नागरिक के यथार्थ जीवन से गहरा सम्बंध रखती है।

'बादल की मृत्यु' (सन् 1930) एकांकी में सर्वप्रथम पाश्चात्य एकांकी टेकनीक का प्रश्रय लिया गया है। कुछ विद्वान इस एकांकी को ही आधुनिक हिन्दी एकांकी साहित्य की प्रथम एकांकी मानते हैं। 'बादल की मृत्यु' विश्वमित्र पत्रिका में प्रकाशित हुआ था तथा उनके सर्वप्रथम संग्रह 'पृथ्वीराज की ऑखें' में संकलित है। डॉ. सत्येन्द्र जी ने इस एकाकी की 'एक घूँट' के अनन्तर दूसरा स्थान दिया है। उनके मतानुसार कला की दृष्टि से यह उतना सफल एकांकी नहीं है, जितना की प्रयोग की दृष्टि से एकांकी के इतिहास में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।[87] वर्माजी का महत्व सर्वोपरि है जिस समय आधुनिक पाश्चात्य प्रणाली के एकांकियों का हिन्दी में विशेष प्रचार नहीं था, उस समय वर्माजी ने प्रस्तुत एकांकी लिखा जिसे डॉ. लक्ष्मी वार्ष्णेय जी ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इसे 'फैन्टेसी' के निकट रखा है। प्रस्तुत एकांकी के पात्र निर्जीव हैं।

'चंपक' एकांकी में एकांकीकार वर्माजी का व्यक्तित्व निखरकर सामने आया है। एकांकी का प्रमुख पात्र किशोर नामक एक कवि है जिसकी कविता उसके कुत्ते के सुनहरे बालों के समान सुनहरी है। इसमें कवि का चरित्र-चित्रण अत्यंत ही मार्मिक और हृदयग्राही ढंग से किया गया है। इसमे प्रायश्चित, अपराध, ममता तथा कर्तव्य का संघर्ष दयनीय है। 'एक्ट्रेस' में एक ऐसी अभिनेत्री का अभिनयात्मक चित्र खींचा गया है जो पति द्वारा उपेक्षित होकर फिल्म जगत् में प्रवेश करती है। इसमें पति-पत्नी के व्यावहारिक जीवन की सामाजिक समस्याओं को उभारा गया है। यह एकांकी वर्माजी की आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की पुष्टि करता है। द्वन्द्व की दृष्टि से प्रभा का चरित्र प्रारंभिक रचनाओं में विशेष महत्व रखता है। प्रभा के मनोभावों में यथास्थान परिवर्तन होता रहता है। इस प्रकार का चरित्र-चित्रण हिन्दी-एकांकी की नई प्रवृत्तियों की ओर संकेत करता है जो पाश्चात्य जीवन-दृष्टि का ही प्रतिफलन है। पात्रों की मनोवैज्ञानिकता पर तथा पात्रो की भाषा पर सदैव वर्माजी का ध्यान रहा है। मनोभावों को व्यक्त करने में वर्माजी सिद्धहस्त रहे हैं। यहाँ संवाद छोटे-छोटे किन्तु चुस्त हैं। पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग है। पौराणिक एकांकी में स्वगत का प्रयोग है। इनमें से बहुत से एकांकी राष्ट्र-प्रेम से ओत-प्रोत हैं। वर्माजी ने अलौकिक पात्रो एवं उपकरणों का प्रयोग एकांकियों मे नही किया है।

वर्माजी ने बुद्धिजीवी वर्ग के लिए भावात्मक एकांकियों की संरचना की है। जिसका संबंध रस से है। ये एकांकियॉ विशेषकर रुपक हैं, जिसके निर्देशक का सहारा लेकर कथासूत्र को आगे बढाया गया है। आपकी भावात्मक एकांकियों के अन्तर्गत 'स्वागत है ऋतुराज', 'कविता का युगपथ', 'सूर सगीत', 'मन मस्त हुआ तब क्या बोले', 'प्रसाद की कला', 'ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया' आदि हैं। आपकी हास्य व्यंग्य को आधार बनाकर रचित एकांकियो में 'चक्कर का चक्कर', 'मैं बौर हूँ', 'महाभारत में रामायण', 'मेढक का बीज' और 'हीरे के झूमके' आदि प्रमुख है। अतः 'जूहि के फूल' नामक संकलन वर्माजी की प्रौढतम कृति है जिसके अन्तर्गत 'चक्कर का चक्कर' एकांकी के अतिरिक्त शेष चारों एकांकियॉ संकलित हैं। 'मैं बोर हूँ' आपकी प्रौढ मस्तिष्क की प्रौढ उपज है। यह एकांकी प्रौढों के मनोविज्ञान पर आधारित है। एकांकी का प्रमुख पात्र किशोरीलाल हास्यजनक परिस्थिति में विवशता और झुँझलाहट का अनुभव करते हैं। किशोरीलाल को उसका नौकर तिरयुगी, उसकी पत्नी और शालीग्राम पंडित तीनों मिलकर बोर करते हैं। 'हीरे के झूमके' एकांकी में व्यग्य को आधार बनाया गया है। एकांकियों में व्यंग्य का प्रादुर्भाव, इसी एकांकी से हुआ है ऐसी मान्यता है। इस प्रकार 'जूहि के फूल' संकलन में वर्माजी ने मानवों के मनोविज्ञान पर विभिन्न प्रकार के उपक्रमों का सहारा लेते हुए हास्य विनोद, व्यंग्य आदि की सृष्टि की है। अतः वर्माजी के एकांकियों का ऐतिहासिक महत्व है। इनसे आधुनिक एकांकी के शिल्प और रंगमंचीय कला के विकास में विशेष सहायता मिली है। वर्माजी के विकासोन्मुख अवस्था में लिखे गए एकांकियों में कथोपकथन लम्बे हैं जो अस्वाभाविक से लगते हैं। किन्तु प्रौढावस्था में लिखे गए एकांकियों में ऐसी बात नही है। आपकी एकांकियों में रंगसंकेतों में जटिलता का दोषारोपण नहीं किया जा सकता है।

नाट्यकार रामकुमार वर्मा के हृदय में बैठा हुआ कवि भावनाओं तथा कविता के संस्कारों से प्रेरित है।[88] टेकनीक की दृष्टि से वर्मा जी ने हिन्दी एकांकी को एक मौलिक संविधान किया है।[89] डॉ. शर्मा ने आपकी एकांकी विशेषता बताते हुए ऋतुराज में लिखा है कि घटनाओं और समस्याओं के पारस्परिक अन्तर्व्यापी नैकट्य को दूर कर जीवन की पृष्ठभूमि पर प्रत्येक घटना और समस्या का स्वाभाविक उभार प्रस्तुत करना वर्माजी की एकांकियों का कौशल है। वर्माजी पात्रों के मनोविज्ञान में संस्कार और प्रभाव का प्रमुख ध्यान रखते हैं। आप संकलनत्रय का बडी कठोरता से पालन करते हैं। स्वाभाविकता के साथ ऐसा नाटकीय संविधान हिन्दी मे प्रथम बार वर्माजी द्वारा प्रतिष्ठित हुआ है।[90] अतः वर्मा जी उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर अपनी एकांकियों में पाश्चात्य शैली को ग्रहण करते हुए एकांकियों को नवीन संविधान दिया जिसको आधार बनाकर आगे अनेक एकाकीकारों ने वर्माजी के मार्ग पर चलते हुए एकाकियों की रचनाएँ

की।

हिन्दी एकांकी के नवोत्थान में भूवनेश्वर प्रसादजी का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी के शीर्षस्थ एकांकीकारों मे इनकी गणना की जाती है। भूवनेश्वर जी की विशेषता इब्सन, बर्नाड शॉ, डी.एच. लारेंस के भाव और विचार प्रणाली के प्रभाव को पूरा-पूरा ग्रहण करने में है। लेखक पर पाश्चात्य प्रभाव इतना अधिक है कि कहीं-कही वे भारत की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विचारधारा को मानो सर्वथा भुलाकर चल रहे हैं। एक प्रकार से बर्नार्ड शॉ और इब्सन के विचारधारा और शैली दोनों ही इनके आदर्श हैं। वैसे तो उनकी प्रत्येक कृति पाश्चात्य प्रभाव का स्मरण दिलाती है लेकिन 'शैतान' में लारेंस की ट्रेजडी की छाया मुखरित हो उठी है। भूवनेश्वरजी यदि चाहते तो पाश्चात्य प्रभाव पर अपनी मौलिक प्रतिभा का रंग चढ़ाकर भारतीय जीवन-दर्शन एवं विचार-दर्शन के अनुरुप उसे ढाल सकते थे लेकिन उनके एकांकियों में ऐसा नहीं पाया जाता है। 'कारवाँ' नामक संकलन में प्राप्त एकांकियों में सामाजिक व्यंग्य, सैक्स सम्बन्धी फ्रायड के विचारधारा का प्रभाव, शॉ और इब्सन की समस्यामूलक प्रवृत्तियाँ आदि का विस्तृत निरुपण इनमें पाया जाता है। आपकी एकांकियॉ अधिकांशतः आधुनिक समाज के मध्यम वर्ग से निकट का सम्बंध स्थापित करती है। मध्यमवर्गीय आदमी अपने बौद्धिक विकास द्वारा ऊपर उठने का प्रयत्न तो करता है लेकिन इससे अधिक वह पाश्चात्य जीवन शैली की चकाचौंध में डूबकर आडम्बरपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए लालायित रहता है। लेखक ने अपनी एकांकियों में सामाजिक रुढियों के प्रति विद्रोह, सैक्स समस्या, पाश्चात्य जीवन शैली का प्रभाव आदि को अधिक विस्तार के साथ निरुपित किया है। आपकी एकांकी कला में पाश्चात्य अनुकरण अधिक है और मौलिकता कम।

'कारवॉ' आपका प्रथम एकांकी संग्रह है जिसने एकांकी जगत् में नई शक्ति, नया स्पन्दन प्रदान किया है। इसमें संकलित एकांकियों का प्रकाशन 'हंस' एवं 'वीणा' नामक पत्रिकाओं में लगभग वर्ष 1933 से शुरु हो गया था। 'कारवाँ' का प्रकाशन वर्ष 1935 है। 'श्यामा : एक वैवाहिक विडम्बना' भूवनेश्वरजी का प्रथम एकांकी है। इसके बाद 'पतिता' हंस 1934 में प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात् 'एक साम्यहीन साम्यवादी', क्रमशः 'प्रतिभा का विवाह', 'रोमान्स-रोमान्च', 'मृत्यु' एकाकी प्रकाशित हुआ। इसके बाद प्रकाशित होने वाली एकांकियॉ परिपक्व हैं। आगे आने वाली एकांकियों में 'हम अकेले नहीं हैं' तथा 'सवा आठ बजे', 'स्ट्राइक' तथा 'ऊसर' हैं। 'रोशनी तथा आग' में भूवनेश्वरजी ने पाश्चात्य शैली को मौलिकता से समाविष्ट करने में एक नया प्रयोग प्रारंभ किया तथा इसमें ग्रीक कोरस की तरह कवित्वमय पूर्वालाप का हिन्दी एकांकी में आविष्कार किया। 'फोटोग्राफर के सामने' भुवनेश्वरजी की उत्तरोत्तर परिपक्वता को प्राप्त होती हुई

प्रतिभा का प्रतीक है। 'तॉबे के कीडे' बडे आदमियों के ड्राइंगरुमों के लिए लिखा गया नई टेकनीक का छोटा-सा एकांकी है। आज की सामाजिक व्यवस्था के प्रति मर्मस्पर्शी व्यंग्य है। ऐतिहासिक एकांकियों में - 'इतिहास की केंचुल', 'आजादी की नीद', 'जेरुशलम', 'सिकन्दर', 'अकबर तथा चंगेजखाँ' आपकी पूर्ण परिष्कृत रचनाएँ हैं। 'जेरुशलम' अंग्रेजी शैली का एकांकी है जिसमें वातावरण का सौन्दर्य है। भाषा उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी है तथा पात्र रोमन और यहूदी हैं। कुछ सांकेतिक प्रयोग भी हैं। 'सिकन्दर' आपका प्रतिनिधि ऐतिहासिक एकांकी है जिसमें आपकी राष्ट्रीय भावना मुखरित हुई है।

पाश्चात्य प्रभाव से आक्रान्त उच्च मध्यवर्गीय स्त्रियों की मानसिकता को समाज की समस्याओं के उभारते हुए अपनी एकांकियों की सर्जना की है। ऐसी स्त्रियॉ जो मातृत्व अर्थात ममता को प्राथमिकता देने की बजाय फैशन परस्त समाज के तौर-तरीके को केवल आर्थिक आधार की दृष्टि से पति को महत्व देते हैं, विवाह के उपरान्त भी अन्य पुरुष के साथ सम्बन्ध रखना आदि समस्याएँ मुख्यतयः एकांकियों में उभरकर आया है। 'श्यामा : एक वैवाहिक विडम्बना' में ऐसे विवाह की विडम्बना दिखाई गई जिसका आधार केवल दिखावा है प्रेम नहीं है। एकांकीकार ने इसमें यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि विधिवत् विवाह का कोई महत्व नही है। 'प्रतिभा का विवाह' की मूल समस्या अर्थ है। इसमें प्रेम और विवाह का वैषम्य दिखाया गया है। 'तॉबे के कीडे' में एकांकीकार ने सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य किया है। 'लॉटरी' और 'रोमान्स और रोमान्च' को छोडकर सभी बहु-दृश्य एकांकी हैं। शॉ तथा अन्य पाश्चात्य नाट्यकारों से प्रभावित एकांकियों में - 'श्यामा : एक वैवाहिक विडम्बना', 'एक साम्यहीन साम्यवादी', 'शैतान', 'प्रतिभा का विवाह', 'रोमान्स : रोमान्च', 'लॉटरी' इत्यादि प्रमुख हैं। इनमें चित्रित समस्याओं की मूल भावना पाश्चात्य समाज से ली गई है।

भुवनेश्वर जी ने अपनी एकांकियों में सामाजिक रुढियाँ, कृत्रिम विचार स्वातन्त्र्य, साम्यवाद, विवाह वैषम्य तथा मनुष्य के अन्तर्जगत् मे उठने वाले कामवासना, प्रेम, क्रोध, ईर्ष्या, प्रतिहिंसा आदि मनोविकारों से उद्‌भुत मानसिक जटिलताओं का मार्मिक चित्रण किया है। इनका द्वन्द्व बाह्य की अपेक्षा आंतरिक अधिक है, बुद्धि की अपेक्षा हृदय का है। आपकी एकांकियों का मूल केन्द्र सैक्स तथा विभिन्न मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का आवेशमय चित्रण है। आपकी एकाकियो मे मुख्यतः सामाजिक कुरीतियों, अनैतिक व्यवहारों, वेश्यावृत्ति, सेक्स, रोमान्स आदि घृणित तथ्यों को रुपायित करके भारतीय नारी की आलोचना का विषय बनाया है। आपने सश्लिष्ट कथानक पर अधिक महत्व नहीं दिया बल्कि अपने समय मे भोगे गए सत्यों को युग-सन्दर्भ मे, कथावस्तु में ऐसे विषयो को निरुपित किया है जो घटनाएँ युगीन

समस्याओं से ओत-प्रोत हैं। भुवनेश्वरजी की एकांकियों में पाश्चात्य नग्नता और अतियथार्थवादिता है। टेकनीक में पाश्चात्य एकांकियों से आप अत्यधिक प्रभावित हैं। यह प्रभाव उन पर हावी रहा है। एकांकी के दृश्यों का प्रारंभ, पात्रों का प्रवेश एवं कार्यकलाप, कथोपकथन, रंगमंचीय सूचनाएँ सभी कुछ पाश्चात्य टेकनीक के अनुरुप है। बिना किसी पूर्व भूमिका, कथासार, पात्रों के मनोभावों, स्थितियों इत्यादि का निर्देश दिए बिना ही आपके एकांकी एकाएक प्रारंभ हो जाते हैं। कथोपकथनों में भी पाश्चात्य ढंग के किफायतशारी, तरलता, मर्मस्पर्शिता और वाक्-वैदग्ध्य है तथा स्वगत का पूर्ण बहिष्कार है। हिन्दी में प्रभाव-व्यंजना के लिए इब्सन, गाल्सवर्दी, बर्नाड शॉ की भॉति नमक मिर्च का व्यंग्य, उग्रता, काव्य का सहज स्पर्श और उपमा का चमत्कार आदि का प्रयोग उनकी कला की ओर आकृष्ट करता है। 'कारवाँ' का उपसंहार बर्नार्ड शॉ के नाटकों की भूमिकाओं से मिलता-जुलता है। पात्रों के चित्रण में व्यंग्य, उपमा और शॉ जैसी तीखी वक्रोक्ति का चमत्कार है। आपने जटिल पात्रों की सर्जना की है। पुरुष पात्र से नारी पात्र अधिक जटिल है। पात्र सीमित रखे हैं तथा उनकी स्वाभाविकता की सदैव रक्षा की है।

आपके एकांकियों का ऐतिहासिक महत्व तो है किन्तु साथ ही जिस खूबी से उन्होंने युगीन समस्याओं का निरुपण एकांकियों में किया है वह हिन्दी एकांकियों को एक नई राह, नए मार्ग पर एकांकी का पदार्पण करवाने का सफल प्रयास है। गोपालकृष्ण कौल ने आपके एकांकियों के सम्बन्ध में अपने मत व्यक्त करते हुए कहा है कि 'भुवनेश्वर प्रसाद एक सफल टेकनीशियन हैं। उन पर शॉ की तार्किक कटुता और व्यंग्योक्तिमय शैली का प्रभाव है, आकस्मिकता उनके एकांकियों का विशेष गुण है, उनके नाटकों की मूल समस्या सेक्स और अर्थ है।'[91]

हिन्दी एकांकीकारों की श्रेणी में जगदीशचन्द्र माथुरजी का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि आपने अधिक एकांकियों की रचनाएँ नही की हैं तथापि एकांकी क्षेत्र मे अत्यधिक ख्याति अर्जित की है। क्योंकि वे युगीन विभिन्न प्रभावों को लेकर इस ओर पदार्पण करते हैं। माथुरजी सदैव नए मार्ग पर बढ़ते हुए नए-नए प्रयोग प्रस्तुत करते हैं। आपने अपने एकांकियों में वर्तमान जीवन की गंभीर और साधारण समस्याओं का चित्रण यथार्थवादी ढग से किया है। आधुनिक जीवन के रुढिग्रस्त संस्कारों और परिवर्तित नयी सामाजिक प्रवृत्तियों के मध्य द्वन्द्व का चित्रण मुख्यतया अपने एकांकियों में किया है। आपकी सबसे बडी विशेषता रगमच के अभिनय के योग्य एकांकियों की रचना है।[92] 1936 में 'मेरी बाँसुरी', नामक एक आधुनिक एकाकी लिखा जो 'सरस्वती' नामक पत्रिका में 1937 में प्रकाशित हुआ। इसमें आधुनिक पाश्चात्य शैली के गुण स्पष्ट है। माथुरजी की एकाकी कला के विकास में इस एकांकी का विशेष स्थान है।

'भोर का तारा' एकांकी संग्रह में आपकी पाँच एकांकियाँ संकलित हैं-'भोर का तारा', 'कलिंगविजय', 'रीढ की हड्डी', 'मकडी का जाला' और 'खंडहर'। 'भोर का तारा' की कथावस्तु गुप्तकालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर सन् 455 के आसपास गुप्त साम्राज्य के कवि शेखर के अभिनव उत्सर्ग की गाथा है। इसमें दो दृश्य है। 'कलिंगविजय' में 261 ई. पूर्व कलिंग विजय के दूसरे दिन की सध्या की घटना है। इसका कथानक अशोक के प्रेम और वैराग्य के ईर्द-गिर्द चक्कर काटता है। 'रीढ की हड्डी' एकांकी वैवाहिक समस्याओं को लेकर आज की पढ़ी-लिखी लडकियों का प्रतिनिधित्व करती है। 'मकडी का जाला' में वैभव की लालसा से दिन-रात मशीन की तरह धनोपार्जन में लगे रहने वाले एक धनी व्यवसाय निपुण अनुभवशाली व्यक्ति का चित्र है। 'खण्डहर' एकांकी आपकी सर्वोत्कृष्ट एकांकी है जिसमें वातावरण का मनोरम चित्रण है। गुप्त मनोभावों तथा दलित अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण यहाँ बडा प्रभावशाली बन पडा है।[93]

'ओ मेरे सपने' एकांकी संग्रह में पाँच एकांकियाँ 'घोंसले', 'खिड़की की राह', 'कबूतरखाना', 'भाषण' और 'ओ मेरे सपने' संग्रहित हैं। 'घोंसले एकांकी में माथुरजी ने जगमोहन और विजय जैसे अतिरंजित पात्रों का समावेश कराकर पुरुष मनोविज्ञान पर प्रकाश डाला है जो नारी मनोविज्ञान से सम्बद्ध है। 'खिड़की की राह' एकांकी में यह दर्शाने का प्रयत्न है कि नारी का प्रेम धन की नींव पर नहीं वरन् गुणों के नींव पर आधारित है। 'भाषण' में झूठी प्रशंसा के लिए दूसरे से उधार लेकर भाषण दिया गया है। सुनने वाले ताली बजानेवाले भी खरीदे व्यक्ति हैं। इसकी कलई तब खुलती है जब भाषण का अंतिम अंश कहीं खो जाता है। 'कबूतर खाना' में दफ्तर की व्यस्तता और 'ओ मेरे सपने' एकांकी में फिल्मी घटनाओं पर संतोष करनेवाले पुरुषों पर व्यंग्य है।

आपके नवीनतम एकांकी 'शारदीया' तथा 'बंदी' हैं। आपके एकांकी आधुनिक सभ्यजगत् की नाना सामाजिक समस्याओं पर व्यंग्य करते हैं। आज के जीवन के छोटे-बडे मामलों का यथार्थवादी चित्रण करने में श्री माथुर दक्ष हैं, किन्तु उनकी सबसे बडी विशेषता यह है कि नाटक केवल समस्या-नाटक मात्र बनकर नहीं रह जाता। उसका एक स्वतंत्र व्यक्तित्व और चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट चित्रित की जाती हैं। आपके एकांकियो मे मनुष्यों में आंतरिक मन में विद्यमान गूढ़तम रहस्यो को उद्घाटित किया गया है। उनके ऐतिहासिक कथानकों वाले एकांकी मे भारतीय आदर्श व्याप्त हैं और सामाजिक कथानकों वाले एकांकियों में समाज की विद्रुपताओ पर व्यग्य किया गया है। आपके पात्र स्वतंत्र व्यक्तित्व और चारित्रिक विशेषता रखते

हैं तथा संवाद योजना में भी यथार्थता है और ये संक्षिप्त हैं, गतिमान और प्रवाहपूर्ण हैं। गतिशील कथानक है तथा उनमें प्रभाव एक्य सदा बना रहता है। इनके एकांकियों की चरमसीमा पर अनायास ही कोई घटना घटित हो जाती है। पात्रों के अनुरुप सहज भाषा और खडी बोली का ही प्रयोग अधिकतर किया है जो जन-साधारण के अधिक निकट है। पात्रो की पोशाक अर्थात् वेश-भूषा की ओर श्री माथुर ने नाट्य-जगत का ध्यान आकृष्ट किया। पात्रों का आंतरिक द्वन्द्व दिखाने के लिए आप विशेष परिश्रमशील रहते हैं। आपके कथोपकथन मर्मस्पर्शी हैं। रंगमंच के सम्बन्ध आपके अनुभव तथा गहन अध्ययन से रंगमंचीय कृत्रिमता विलुप्त हो गई तथा हिन्दी की नाट्य-कला के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ।

हिन्दी साहित्य में प्रसादयुगीन एकांकीकारों में पं. उदयशंकर भट्टजी का नाम महत्वपूर्ण स्थान रखता है। हिन्दी के आधुनिक नाट्य-साहित्य और विशेषतः एकांकी के उन्नायकों में भट्टजी की प्रतिभा और बहुमुखी है। वे एक कुशल नाट्यकार या एकांकीकार ही नहीं, अपितु उदात्त और प्रतिभाशाली आलोचक, एक कवि जिन्होंने प्राचीन सास्कृतिक और सामाजिक अर्थात् प्राचीन शैली को त्यागकर आधुनिक समाज के लिए, नए जीवन के स्पन्दन के लिए यथार्थवादी चित्र एकांकियों में प्रस्तुत किया है। उन्होंने आधुनिक समस्याओं पर बड़े ही व्यंग्यात्मक ढंग से विद्युत-प्रकाश डाला है ।

आपने सन् 1938 से एकांकी लेखन प्रारंभ किया। सर्वप्रथम एकांकी 'एक ही कब्र में' 'हंस' नामक पत्रिका में हिन्दु-मुस्लिम एक्य भावना को लेकर प्रकाशित हुआ। एकांकी के माध्यम से साम्प्रदायिक एकता का प्रयास किया गया है। 'अभिनव एकांकी नाटक' पहला एकांकी नाटक संग्रह है। अन्य प्रमुख संग्रह है- 'स्त्री का हृदय', 'चार एकांकी', 'पर्दे के पीछे', और 'आज का आदमी' आदि हैं। 'अभिनव एकांकी नाटक' संग्रह मे छः एकांकियाँ संकलित है -'दुर्गा', 'नेता', 'उन्नीस सौ पैंतीस', 'वर निर्वाचन','एक ही कब्र में', 'सेठ लाभचंद'। 'दुर्गा' एकांकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसमें दो दृश्य हैं। 'नेता' एकांकी में ऐसे नेताओं पर व्यंग्य किया गया है जिनकी कथनी और करनी में जमीन-आसमान का अंतर दृष्टिगोचर होता है। यह अनेक दृश्योंवाला एकाकी है। अंतिम दृश्य प्रभावशाली है जिसमें नेता की पोल खुलती है। 'उन्नीस सौ पैतीस' में बेकारी की समस्या को एक युवक सुरेन्द्र के माध्यम से मुख्यतया उभारा गया है। इसमें एक दृश्य है। 'वर निर्वाचन' एकांकी में भट्टजी ने आधुनिकाओं के रोमान्स, आराम-तलब, वैभवप्रिय जीवन, आवेशपूर्ण दुष्प्रवृत्तियों, अहम् भावों की उलझने आदि हैं। आपके एकांकियों में सामाजिक समस्याओं और सुधारवादी दृष्टिकोण का प्राधान्य है। साथ ही वे पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा प्रागैतिहासिक काल के घटना-चक्रों को लेकर भी एकांकी लिखते रहे। उनके एकांकियों की एक विशेषता है कि वे अपनी सहज

भावुकतावश प्रतीक संकेतों तथा भाव-नाट्यों की योजना भी उनके अन्तर्गत करते चलते हैं।

'आदिम युग' संग्रह में सात एकांकियाँ संग्रहित हैं - 'आदिम युग', 'प्रथम विवाह', 'वैवस्त मनु और मानव', 'कुमार संभव', 'क्रांतिकारी विश्वमित्र', 'शशिलेखा', 'सौदामिनी' आदि है। यह एकांकियाँ पौराणिक प्रसंगों पर आधारित हैं। भट्टजी इसमें प्राणी-विज्ञान, समाज-शास्त्र तथा नृ-विकास, विज्ञान आदि के तत्व संयोजित कर एकांकियों के क्षेत्र में नवीन दृष्टि दी है। इन एकांकियों के माध्यम से सभ्यता और संस्कृति के विकास को चित्रित करने का सफल प्रयास किया है।

'समस्या का अंत' सग्रह में नौ एकांकियाँ संग्रहित हैं - 'गिरती दीवारें', 'समस्या का अंत', 'पिशाचों का नाच', 'बीमारों का इलाज', 'आत्मदान', 'मंदिर के द्वार पर', 'जीवन', 'वापसी', 'दो अतिथि'। इन सभी एकांकियों का मुख्यतया दृष्टिकोण सामाजिक है। 'समस्या का अंत' एकांकी चार दृश्यों में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर है। 'गिरती दीवारें' प्राचीन अंधविश्वासों पर आधारित एकांकी है। 'पिशाचों का नाच' साम्प्रदायिक दंगो के दृश्यों को उपस्थित करते हुए नारी उद्धार की भावना से सम्पृक्त है। 'बीमारों का इलाज' एक प्रहसन है। इसमें चिकित्सा पद्धतियो पर हंसने का म्रमक प्रयास किया गया है। 'आत्मदान' में लेखक ने यह बतलाने का प्रयास किया है कि नारी का आत्मसमर्पण में ही सुख और कल्याण सन्निहित है। 'मंदिर के द्वार पर' एकांकी के माध्यम से पुजारी द्वारा अछूतों पर होने वाले अत्याचार को दिखाने के अभिप्राय से एकांकीकार ने दो दृश्यों में इस एकांकी की रचना की है। 'दो अतिथि' में दो ढोंगी उपदेशकों के आचरण पर कटु व्यंग्य कसा गया है। इसका कथानक एक रेल्वे स्टेशन मास्टर पर आधारित है। भट्टजी ने सामाजिक एकांकियों में उस खोखलेपन, पाखण्ड, आडम्बर और दुरभिमान का चित्र खीचा है जिसके कारण भारतीय राष्ट्र सामाजिक रुप से जर्जर बन रहा है।[94]

'धूमशिखा' एकांकी संग्रह मे भट्टजी की छः एकांकियों जिनमें - 'धूमशिखा', 'अघटित', 'विस्फोट', 'नया नाटक', 'नए मेहमान' और 'अंधकार' संग्रहित हैं। इस पूरे सकलन मे हमें भट्टजी की प्रौढ शैली दृष्टिगोचर होती है। यहाँ लेखक वादों से तटस्थ एक अपना वाद विवेकपूर्ण मानवतावाद लेकर अवतरित होते हैं। वह किसी वर्ग, दल, समाज आदि में न बँधकर समाज की प्रकृति-विकृति के आलोचक बन गए है। भट्टजी एक चिकित्सक की भाँति सामाजिक विकृतियों के सडे गले घाव में नस्तर चुभोते हुए नजर आते हैं। 'धूमशिखा' एकांकी में वर्तमान युवापीढी जो वासनाग्रस्त हैं ऐसे युवकों को एकांकी का माध्यम बनाकर एक जोरदार थप्पड मारा है जिसे ऐसा रोमाटिक युवक वर्ग एक प्रकार से तिलमिला उठेंगे। 'नया नाटक' की कथावस्तु हिन्दी लेखकों की दयनीय स्थिति, मकान मालिकों की हृदयहीनता, पैसे पर बिकनेवाले चापलूस

संपादकों और राजनैतिक उलझनों पर आधारित है।

'पर्दे के पीछे' एकांकी संग्रह में 'नयी बात', 'बाबूजी', 'यह स्वतंत्रता का युग', 'मायोपिया', 'अपनी खाट पर', 'बार्गेन', 'ग्रहदशा' और 'पर्दे के पीछे' एकांकियाँ संग्रहित हैं। तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि विषयों का एकांकियो में व्यंग्यपूर्ण आलेखन प्रस्तुत किया। इन एकांकियो मे आत्मचेतन की भावना मुखरित हुई है। 'नयी बात' एकांकी में भारतीय संस्कृति को उपेक्षित दृष्टि से देखने वाले भौतिकवादी युवकों पर कटु व्यंग्य किया गया है। 'बार्गेन' और 'मायोपिया' में आधुनिक युवकों एवं आधुनिकाओं के प्रेम-सम्बन्धों की समस्याओं को लेखक ने चित्रित किया है। 'यह स्वतंत्रता का युग' में नारी स्वातंत्र्य को नाटक का विषय बनाकर स्वतंत्र अधिकार माँगने वाली नारियों की भ्रान्तधारणा एवं उसकी उच्छृंखलता को प्रदर्शित किया गया है। 'बाबूजी' एकांकी में भौतिकवादी प्रवृत्ति सहज मानवीय प्रवृत्ति पर किस प्रकार अपना दखल देने लगी है इसका व्यंग्यात्मक चित्र उपस्थित है। 'पर्दे के पीछे' एकांकी एक सामाजिक व्यंग्य है इसमें मानव के अंतर और बाह्य देखने का व्यंग्यात्मक प्रयास है जहाँ मात्र वैषम्य ही दिखाई देता है।

'आज का आदमी' एकांकी संग्रह में - 'आज का आदमी', 'सत्य का मंदिर', 'तीमारदारी' आदि एकांकियाँ संकलित हैं। 'आज का आदमी' में मनुष्य की अन्तर्मन और बाह्य दृष्टियों से वैषम्यता दिखाई गई है। 'सत्य का मंदिर' में इसकी अर्थात् 'आज का आदमी' की कथा को बदलकर रख दिया गया है। इसके अतिरिक्त भट्टजी ने 'विश्वामित्र', 'मत्स्यगंधा', 'राधा' नामक तीन भाव नाट्यों की रचना की है। एकदा नैमिष्यरण्य नारदजी के चरित्र पर रचा एक प्रहसन है। 'कालीदास', 'द्रोण', 'मदन-दहन', 'अश्वत्थामा' आदि चरित्र-प्रधान एकांकी हैं। आपके एकांकी साहित्य में गंभीर संकेतवादी प्रतीक रुपकों, काव्य नाटकों से लेकर भावनाट्य संगीत रुपक, प्रहसन आदि सभी प्रकार की रंगमंचीय तथा ध्वनि-एकांकी शैली की रचनाएँ मिलती हैं जिनमें तटस्थ दृष्टि से एकांकीकार ने जीवन, समाज, इतिहास का ज्वलन्त और अछूती समस्याओं का चित्रण अत्यन्त सफलता से किया है। "वे प्राचीन संस्कारों का आदर्श लेकर नवीन यथार्थ के प्रति चिरजागरुक रहे हैं। उनमे मानव के प्रति सहज निष्ठा, जीवन के प्रति सच्चा अनुराग और इस निष्ठा तथा अनुराग को मूर्त रुप देने की लगन है।"[95] आपकी प्रत्येक एकांकी तीक्ष्ण व्यंग्य के साथ-साथ एक समस्या का समाधान करते हुए विषमता के संघर्ष का चित्र उपस्थित करता है। मुख्यतयः आपका ध्यान अपने एकांकियों में कथावस्तु पर ही केन्द्रित है तथा संवाद योजना पर विशेष ध्यान दिया है और ये छोटे-छोटे तथा चुस्त है। एकांकियों मे संवाद सर्वत्र गद्यात्मक हैं, केवल भाव-नाट्यों में ही पद्यात्मक संवाद हैं। भट्टजी पर पात्रों के बहुलता का दोष देखा जा सकता है किन्तु पात्रों को देशकाल और वातावरण के अनुसार ही

चयन किया गया है। सामाजिक एकांकियों के पात्र आधुनिक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और सांस्कृतिक एकांकियाँ पौराणिकता का। आपकी कला, कला के लिए नही, वरन् जीवन के विकास के लिए है। संकेतात्मकता तथा प्रतीक आपकी शैली की विशेषताएँ हैं। आपका एकांकी-साहित्य सामाजिक आलोचना, राष्ट्रीय जागरण तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान से सम्बंधित है। एकांकियों के उद्देश्य और निष्कर्ष को विशेषता प्राप्त है।

पाश्चात्य शैली से प्रभावित सशक्त एवं जागरुक एकांकीकारों की श्रेणी में उपेन्द्रनाथ 'अश्क' जी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यद्यपि इन्होंने अपना एकांकी लेखन का कार्य सन् 1936 से प्रारंभ किया है किन्तु अभी कुछ समय पूर्व तक वे अपनी इस विधा में छुट-पुट रचनाएँ प्रस्तुत करते रहे हैं और अपनी प्रबद्धता से विधा को विस्तृत और समृद्ध बनाते रहे हैं। युगीन सत्य को स्वयं देखकर यथार्थता के बल पर उन्हें परखते हुए बडी ही कुशलता से अपनी रचनाओं में उन्हें बद्धित किया है। मुख्यतः उनकी एकांकियों का परिवेश सामाजिक और पारिवारिक रहा है। एकांकी के शिल्प के प्रति सदैव सजगता रखते हुए उन्होने वर्तमान समाज की रुढियों, मिथ्याडम्बरों, दुर्बलताओं, अन्य कई प्रकार की विकृतियों को ही मुख्यतः एकांकी का विषय बनाया और व्यंग्य के माध्यम से उन्हें रोचक पूर्ण बनाकर हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है।

आपके एकांकी संग्रहों में 'देवताओं की छाया में ', 'चरवाहे', 'पक्कागाना', 'पर्दा उठाओ, पर्दा गिराओ', 'अंधी गली' और 'साहब को जुकाम है' प्रसिद्ध है। आपका प्रथम एकांकी संग्रह 'देवताओं की छाया में', 'विवाह के दिन', 'आपस का समझौता', आदि सात एकांकियाँ हैं। इनका प्रणयन यद्यपि 1936-37 के मध्य हुआ है लेकिन 1935 के आस-पास के त्रस्त मध्यवर्गीय समाज के अस्त-व्यस्त सामाजिक जीवन का चित्र है जिसका केन्द्रबिन्दु उस समय की उदित संस्कृति, राजनीतिक चेतना, आदर्श सामाजिक जीवन जिनमें नवीनता की टक्कर और युगीन माँग प्रमुख थीं। 'जोक' एक प्रहसन है। इसमें एक अंक और तीन दृश्य हैं। मध्यवर्गीय परिवार में आने वाले बिन बुलाए मेहमान की आ जाने से और फिर जाने का नाम न लेने से जो कठिनाईयाँ उत्पन्न होती हैं उनके जोंक की तरह चिपक जाने से 'जोंक' एकांकी का नामकरण कर व्यंग्य प्रस्तुत किया गया है। 'पहेली' एक झाँकी है जो एकांकी के प्रकार के अन्तर्गत आ जाता है। इसमे मध्यवर्गीय अभावों को अंकित किया गया है। 'अधिकार का रक्षक' में ऐसे सेठ को व्यंग्यरुप में प्रस्तुत किया गया है जिसकी कथनी-करनी मे महान् अंतर है। क्षुद्र और अवसरवादी प्रवृत्ति का सेठ स्वयं को सभी वर्गो के अधिकारों का रक्षक बताता है। किन्तु यह सभी दिखावामात्र होता है। इसमें शैलीगत कमजोरियाँ एवं नाटकीयता का अभाव है। 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी में धन का लोभी, स्वार्थपूर्ण आचरण वाले पारिवारिक

जीवन का चित्रण किया गया है। 'विवाह के दिन' एकांकी में समाज की प्राचीन रुढियों पर व्यंग्य किया गया है। 'देवताओं की छाया में' एकांकी के अन्तर्गत 'अश्क'जी ने मजदूर वर्ग की दयनीय हालत बताते हुए पूँजीपति वर्ग पर व्यंग्य किया है। आपने मूलतः इस संकलन में समाज में व्याप्त कुरीतियों के घातक परिणामों का वर्गगत जो विषमताएँ हैं उनसे उत्पन्न होनेवाले संघर्षो तथा निम्न वर्ग की दिन-प्रतिदिन गिरती दशा का विशद् और व्यापक रुप में यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। यद्यपि ये रचनाएँ इन समस्याओं का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करती हैं तथापि अपने उद्देश्य को हमारे समक्ष संप्रेषित करने में पूर्णतः सफल लगती है और यही 'अश्क'जी की एकांकी की सबसे बडी सोद्देश्यता है।

इन एकांकियों में संकलनत्रय का निर्वाह अधिकांशतः हुआ है , सर्वत्र रंग संकेत, रंगमंचीय सरलता तथा पात्रों की विविधता पर ध्यान रखा गया है किन्तु कथानक निर्माण, चरमसीमा और संघर्ष आदि पर विशेष ध्यान नहीं दिया है। चुँकि 'अश्क'जी संवादों के सम्राट माने जाते हैं अतः संवादों का चयन पात्रों के अनुसार तथा ये संक्षिप्त और सदा चुस्त हैं। पात्रोनुसार ही भाषा का भी चयन किया गया है। 'चरवाहे' एकांकी सग्रह आपका दूसरा संग्रह है। विकास की दृष्टि से देखने पर यह 'देवताओं की छाया में' संकलन से अधिक सशक्त और प्रभावशाली है। प्रस्तुत संकलन में 'चरवाहे', 'चुम्बक', 'चिलमन', 'खिडकी', 'सूखी डाली', 'मैमूना' और 'चमत्कार' आदि सात एकांकियाँ हैं। एकांकियों का नामकरण प्रतीकों के रुप में यहाँ एकांकीकार ने किया है। प्रतीकों के माध्यम से 'अश्क'जी सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को, घटनाओं तथा जटिल विषयों को बडी कुशलता से रखते चले गए हैं। प्रस्तुत संग्रह में ज्यादातर एकांकियाँ जैसे- 'चरवाहे', 'चुम्बक', 'चिलमन', 'खिडकी' और 'सूखी डाली' आदि नारी प्रधान हैं। स्त्रियो के अन्तर्मन में व्याप्त गूढ रहस्यों, अन्तर्भाव आदि को मुख्यतः व्यक्त करना ही इन एकांकियों का विशेषतः उद्देश्य रहा है। आपने इस पूरे संग्रह में सकेत और प्रतीक शैली के द्वारा युगीन व्यतीत जीवन को, मानव-मन के गूढतम रहस्यों को एकांकियो में बडी ही सूक्ष्मता से उद्घाटित किया है। 'चुम्बक', 'चरवाहे', 'मैमूना', 'खिडकी' आदि पजाब के ग्रामीण जीवन पर आधारित हैं तथा इनमें सामान्यतः एक-सी शैलियाँ विद्यमान हैं अर्थात् शिल्प की दृष्टि से इनमें एकता है। इन संकेतात्मक एकांकियों के संवादों पर तथा कथानक निर्माण पर एकांकीकार ने सदैव ध्यान रखा है। पात्रोनुसार तथा प्रसंगानुसार भाषा का प्रयोग है तथा रंगमंचीय सरलता पर भी आपने पूर्ण ध्यान दिया है। इनमें विस्तृत रंग सकेत हैं।

आपका तीसरा संग्रह 'पक्का गाना' है इसके अन्तर्गत 'तूफान के पहले', 'बहने', 'पापी', 'नया पुराना', 'वेश्या', 'कामदा' और 'पक्का गाना' एकांकियो का संकलन है। विकास की दृष्टि से पूर्व विरचित

दोनों संग्रहों से अधिक प्रौढ और विकसित रुप में है। प्रथम दोनों संग्रहों में 'अश्क' जी की दृष्टि यथार्थवादी दिखाई देती है किन्तु प्रस्तुत संग्रहमें आपकी दृष्टि आदर्शवादी दिखाई देती है। मुख्यतः 'अश्क'जी ने कथानकों का चयन समाज की यथार्थ और आदर्श रुपों में की है। अतः इनमे विविधता आ गई है। 'तूफान के पहले' एक सामाजिक एकांकी हे जिसमें हिन्दु-मुस्लिम सम्प्रदाय के संघर्ष को बताया गया है चुँकि इसकी रचना स्वतंत्रता पूर्व हुई है अतः ऐसी समस्याओं का चित्रण करके एकांकीकार ने युगीन उद्घोष किया है। 'कामदा' भी एक सामाजिक एकांकी है जिसमें आधुनिक नारियों के प्रेम और विवाह जैसे मसलों को उठाया गया है। इसी प्रकार के कुछ कथानकों को लेकर 'बहनें' एकांकी की भी रचना हुई है। आधुनिक फैशन परस्ती की अधीन होकर पाश्चात्य ढंग के वैवाहिक सम्बन्धों को अधिक श्रेष्कर समझना जैसी युगीन मानसिकता को, ऐसी मनःदशा रखने वाली नारियों के माध्यम से व्यक्त किया है। 'पापी' और 'वेश्या' नामक एकांकियों में सेक्स की समस्या को उठाया गया है। इस संग्रह का अंतिम एकांकी 'पक्का गाना' है, जो प्रहसन के रुप में श्रेष्ठतम है। एकांकीकार ने इसमें आज के उट्पटांग (ऊल-जलुल) के गानों पर व्यंग्य किया है। इस संग्रह में आपने गीतों की योजना की है जो गत्यावरोध उत्पन्न करते हैं किन्तु संवाद संक्षिप्त और चुस्त हैं। पात्र आधुनिक और प्राचीन दोनों रुपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। नारी पात्रों की बहुलता है। नाटकीय भाषा के प्रयोग में 'अश्क'जी सिद्धहस्त हैं। अतः भाषा पात्रानुरुप एवं प्रसंगानुकूल है। सभी एकांकियों में एक ही दृश्य, सर्वत्र रंग संकेत और शैली की गंभीरता की अपेक्षा रंगमंचीय सरलता अधिक है। दृश्य-विधान के अन्तर्गत 'अश्क'जी ने यहाँ पर्दा का बहिष्कार किया है तथा व्यवस्था का प्रयास किया है कि सभी एकांकी एक ही व्यवस्थित स्टेज पर एक के बाद एक अभीनीत हो सके।

तत्पश्चात् 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ' एकांकी संग्रह प्रकाशित हुआ जिसके अन्तर्गत 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ', 'कइसा साब कइसी आया', 'बतसिया', 'सयाना मालिक', 'तौलिए', 'कस्बे के क्रिकेट क्लब का उद्घाटन' और 'मस्केबाजों का स्वर्ग' एकांकियाँ संग्रहित हैं। 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ' एक प्रहसन है। इसमें अधकचरे अभिनेताओं, प्रदर्शकों, निर्देशकों, रंगमंचन से पूर्व होने वाली गडबडियों, लापरवाह प्रोम्पटरों आदि पर हास्य प्रस्तुत किया गया है। 'कइसा साब कइसी आया' शीर्षक एकांकी का केन्द्रबिन्दु साहब और आया की वासनात्मक वृत्ति है। 'बतसिया' एक चरित्र प्रधान एकांकी है जिसमें बतसिया के चरित्र को उभारा गया है। 'सयाना मालिक' की कथावस्तु नौकर और मालिक की समस्या पर आधारित है। 'तौलिए' एकांकी दो विपरीत सस्कारों के संघर्ष को दर्शाता है। 'अश्क'जी का मुख्यतः ध्यान रगमंचीयता तथा पात्रो के मनोभावों पर रहा है। भाषा पात्रोचित और प्रसंगानुकूल है तथा विस्तृत रगसंकेत हैं। शैली एवं शिल्प की दृष्टि से सभी उत्कृष्ट रचनाएँ हैं।

'अंधी गली' में आपने एक नए प्रकार का प्रयोग किया है जो सम्पूर्णतः नाटक है किन्तु इसमें सात एकांकियॉ भी सम्मिलित हैं। कथावस्तु शहरी जीवन के प्रायः रहनेवाले जन-जीवन जो मूलतः गली मे निवास करते हैं उनका यथार्थ अंकन किया है जिसके पात्र मध्यवर्गीय हैं। प्रत्येक एकांकी अपने अलग रुप और मुद्दे को लेकर रचित है। समस्याओं को संवादो के माध्यम से उठाया गया है। संकलनत्रय का निर्वाह हुआ है। नाटकीयता का अभाव है। 'साहब को जुकाम है' एकांकी संग्रह में पॉच एकांकियॉ - 'किसकी बात?', 'फादर्ज', 'कुसुम का सपना', 'घपले', 'साहब को जुकाम है' संग्रहित हैं। 'किसकी बात?' एकांकी में हिन्दी के आग्रहियों पर तथा पुरुषों की अहम् प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है। 'फादर्ज' एकांकी में माहौल अर्थात् हालात की प्रधानता दिखाई गई है। इसमें छोटे-छोटे बारह दृश्य हैं। यह एकांकी 'अश्क' जी का नया प्रयोग था। चक्रील रंगमंच पर खेले जाने के लिए आपने इसकी रचना की थी। चक्रील रंगमंच की दृष्टि से यह उत्तम रचना है। स्मृति दृश्य इसमें सर्वाधिक सफल रहा है। 'कुसुम का सपना' में सौतेली माँ के व्यवहार को प्रदर्शित किया गया है। इसमें तीन दृश्य हैं। 'घपले' शीर्षक एकांकी रेडियो स्टेशन के कार्यक्रम से सम्बंधित है। इसमें रेडियो प्रसारण में होनेवाली गडबडियों पर हास्य प्रस्तुत किया गया है। 'साहब को जुकाम है' में तथाकथित कला प्रेमियों का मजाक उडाया गया है। यह 'अश्क'जी का सफल प्रहसन है।

इस प्रकार 'अश्क'जी की एकांकियों में कथानक पर्याप्त विविधता लिए हुए है। त्रस्त समाज के चित्रण में वे पूर्णतः सफल रहे हैं। भाषा पर आपका पूर्ण अधिकार दिखता है। संवादों के तो वे सम्राट माने जाते हैं तथा बोलियों के अजायबघर में वे निवास करते हैं ऐसे कथ्य 'अश्क' जी के बारे में प्रचलित हैं। अतः इसमें कोई संदेह नहीं कि अपने प्रबुद्धता से हिन्दी एकांकी के विकास में आपने अपना अमूल्य योगदान दिया है।

हरिकृष्ण प्रेमी ने एकांकी के क्षेत्र में बहुत ही अल्प समय में ही अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रसिद्धि पाई है। प्रेमीजी राष्ट्रीय चेतना और नैतिक आदर्शवाद के कलाकार है। आपकी प्रसिद्ध एकांकी रचनाए हैं - 'मान मंदिर', 'बादलों के पार', 'मातृ मंदिर', 'सेवा मंदिर', 'राष्ट्र मदिर', 'यह मेरी जन्मभूमि है', 'न्याय मंदिर', 'गृह मंदिर', 'वाणी मंदिर', 'यह भी एक खेल है', 'प्रेम अंधा है', 'घर या होटल', 'रुपशिखा', 'नया समाज', 'मातृभूमि का मान', 'निष्ठुर न्याय', 'पश्चाताप' आदि। 'रुपशिखा', 'प्रेम अंधा है', 'नया समाज', 'मातृभूमि का मान', 'न्यायमंदिर' आदि एकांकी आपकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर विरचित एकांकी हैं। शेष एकांकी सामाजिक एकांकी हैं। 'रुपशिखा' की पृष्ठभूमि मे रुपमति और बाज बहादुर की प्रसिद्ध कहानी है।

'प्रेम अंधा है' एकांकी मुगल कालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर औरंगजेब और मुराद से सम्बन्धित है। 'मान मंदिर' में महाराजा, महाराणा लाखा की बूँदी पर विजय और हाडा वंशीय सैनिकों की वीरगाथा है। 'सेवा मंदिर' आपकी सामाजिक एकांकी है जिसमें एक विधवा की कथा है। इसमें एकांकीकार प्रेमी जी ने विषाद और मादकता दोनों को समन्वित रुप में प्रस्तुत करके एकांकी नाटक को एक नया मोड़ दिया है। 'मातृ मदिर' में साम्प्रदायिक दगे को लेकर हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया है। 'राष्ट्र मंदिर' एकांकी में स्वतंत्रता की समस्या को इंगित करते हुए यह हिन्दू-मुस्लिम और अंग्रेजों से सम्बंधित है। 'वाणी मंदिर' में निर्धन कवि की निर्धनता वर्णित है। 'घर या होटल' में आधुनिक नारी जीवन से सम्बद्ध है। 'गृह मंदिर' मे दो पत्नियों की सामाजिक समस्या सुलझायी गई है। अतः आपकी सामाजिक एकांकियों में कहीं आदर्शवादी दृष्टिकोण व्यक्त है तो कहीं-कहीं यह पूर्णतः राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है। कहीं सामाजिक समस्याओ को मुख्यतः उजागर किया गया है तो कहीं नैतिकता पर बल दिया गया है। आपके 'मालव प्रेम' और 'यह भी एक खेल है' को छोडकर अन्य सभी एकांकियों में अनेक दृश्य हैं। 'रुपशिखा' में सात दृश्य हैं। इन्होंने संकलनत्रय की अनिवार्यता नही मानी है। मंचीय सरलता का ध्यान नहीं रखा गया है बल्कि आपके कवि-हृदय ने लम्बे-लम्बे कथोपकथनों की योजना की है जिनमें स्वगत कथोपकथनों की भरमार है और अधिकांश कथोपकथन तार्किकता लिए हुए हैं। इनमें साहित्यिकता और बौद्धिकता का समावेश है। पात्रीय चरित्र-चित्रण द्वारा संवाद का विकास हुआ है। पद्यात्मक संवादों के साथ-साथ प्रेमीजी के गद्यात्मक संवादों की भाषा में भी साहित्यिकता के दर्शन होते हैं। पात्र सजीव है और उनके चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता है। कथानक सपाट है। आपके एकांकियों में अभिनय तत्व की अपेक्षा कल्पनत्व अधिक है अतः कौतूहलता में भी कमी आ गई है।

भगवतीचरण वर्माजी यथार्थवादी एकांकीकारों की श्रेणी में अपना प्रमुख स्थान रखते है। इन्होने अपनी एकांकियों में स्वयं व्यतीत जीवन सत्यों को उद्घाटित किया है। आपकी एकांकियॉ हैं - 'सबसे बडा आदमी', 'मैं और केवल मैं', 'दो कलाकार' और 'चौपाल में' आदि। 'सबसे बडा आदमी' उदयशंकर भट्ट द्वारा सम्पादित आधुनिक हिन्दी एकांकी में प्रकाशित हुआ था। इसकी रचना वर्माजी ने एक घटना के आधार पर की। इसमें एक धूर्त व्यक्ति का चित्र है। एकांकी के कथानक में संश्लिष्टता नहीं है और कार्य-व्यापार का भी अभाव है किन्तु आद्यन्त (आरंभ से अत तक) रोचकता बनी रहती है। इसमें समाज का यथार्थ चित्रण है तथा एक अंक में है। 'मैं और केवल मै' 1938 के 'हंस' एकांकी विशेषांक में प्रकाशित हुआ था। इसमे नग्न यथार्थता है। वर्माजी ने इसमें कटु सत्य को व्यक्त किया है कि मनुष्य अपने दुःख और निराशा के क्षणो में जघन्य से जघन्य काम भी कर सकता है। 'दो कलाकार' में आर्थिक विकृतियों पर कटु

व्यंग्य है। 'चौपाल में' ग्रामीण की पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसमें छुआछूत की समस्या उठाई गई है तथा उसका हल प्रस्तुत किया गया है। वर्माजी ने एकांकियों में मंचीय सरलता का ध्यान रखा है। पात्र सजीव हैं। संवादों मे स्वाभाविकता है। संवाद पात्रोचित और स्वाभाविक हैं। इनके निर्माण मे आप अधिक सतर्क और सजग लगते हैं तथा हल्के रंग संकेत दिखाई देते हैं।

लक्ष्मीनारायण मिश्रजी ने एकांकियों की रचना द्वारा इसके विकास के मार्ग को प्रशस्त किया है। आपकी एकांकियों में 'अशोकवन', 'प्रलय के पंख पर', 'एक दिन', 'कावेरी में कमल', 'बलहीन', 'नारी का राग', 'भगवान मनु', 'स्वर्ग में विप्लव' और 'विषपान' आदि है। मिश्रजी कल्पना में विचरण नहीं करते है। भावुकता का उनकी एकांकियों में कोई स्थान नहीं है। यथार्थता पर मुख्य बल देते हैं। आप पर पाश्चात्य नाट्यकारों की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। 'अशोकवन' एकांकी रावण और जानकी की घटना पर विशेषतः आधारित है। 'एक दिन', 'नारी का राग', 'विषपान', 'कावेरी में कमल' और 'स्वर्ग में विप्लव' आदि एकांकियों में किसी न किसी रुप में सेक्स की समस्या को उठाया गया है। मिश्रजी ने अपने एकांकियो में कथानकों का चुनाव विशेषतः इसी समाज के विद्रुपताओ से किया है। कुछ कथानक पौराणिक विषयों पर आधारित हैं। मिश्रजी की तार्किक प्रवृत्ति के कारण कहीं-कहीं अनावश्यक विस्तार हो गया है। आपकी एकांकियों में सकलनत्रय का निर्वाह हुआ है और सभी एकांकियों में गद्यात्मक संवाद मिलते हैं। पद्यात्मक संवादों का पूर्णतया निषेध मिश्र जी की एक बडी देन है। कथानक सर्वत्र गतिशील रहा है। मिश्रजी के पात्र किसी न किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनके पुरुष पात्र दंभी और अहम्वादी हैं। पात्रों के मनोभावों, वेश-भूषा, रंगसज्जा, वेश-विन्यास, रुपसज्जा आदि का सजीव चित्रण हुआ है। आपने संवादों के क्षेत्र में मनोविश्लेषण शैली को अपनाया है। यह संक्षिप्त और चुस्त हैं। भाषा सरल, प्रसादयुक्त एवं प्रवाहमयी है। इनके रंगसंकेत सर्वत्र विस्तृत एवं व्यापक हैं।

सेठ गोविन्ददासजी ने हिन्दी में रंगमंचीय समस्या एकांकियों की सृष्टि की है जिनमें भारतीय सांस्कृतिक चित्रण के अतिरिक्त वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं के विविध चित्र पाश्चात्य नाट्यकारों के अनुकरण पर पर्याप्त मौलिकता से प्रस्तुत हैं। भारतीय संस्कृति के उपासक के रुप में आपने अपनी एकाकियो में प्राचीन भारतीय गौरव, संस्कृति, आचार-विचार का प्रतिपादन किया है। प्रसादजी की भाँति आप आर्य संस्कृति पर निर्भर आधुनिक एकाकीकार हैं। प्रसादजी ने प्राचीन संस्कृति और भारतीय इतिहास को देखा है, सेठजी ने मुख्यतः वर्तमान बहुमुखी जीवन को देखा है। उनका क्षेत्र दूर-दूर तक फैला हुआ भारतीय समाज और उसका जीवन है। इस दिशा मे आप प्रेमचद के सहयात्री हैं। सेठजी ने अपनी

एकांकियों में अपने समय के समाज के विविध वर्गो, विविध समस्याओं तथा आन्दोलनों का चित्र प्रस्तुत किया है। विषय की दृष्टि से आपकी एकांकियों में 'स्पर्द्धा', 'मानवमन', 'निर्माण का आनंद', 'मैत्री', 'सुदामा के तन्दुल', 'आई सी', 'यू नो', 'हंगर स्ट्राइक', 'धोखेबाज', 'फाँसी', 'व्यवहार', 'अधिकार लिप्सा', 'ईद और होली', 'आधुनिक यात्रा', 'बंद नोट', 'उठाओ खाना', 'बूढे की जीभ', 'चौबीस घण्टे', 'महाराज', 'जाति उत्थान', 'विटेमिन', 'वह मरा क्यों?', 'अर्द्ध जागृत' आदि सामाजिक समस्या प्रधान एकांकियाँ हैं। इसमे उच्च मध्यम वर्ग का सफल अंकन है। सेठजी ने समाज में व्याप्त समस्याओ पर व्यंग्यात्मक तथा हास्यात्मक दृष्टिकोण से सामाजिक मिथ्याचार, किसान मजदूरों का शोषण, जातिगत ऊंचनीच, वृद्धों की स्वाद लोलुपता, ब्राह्मणों की पतितावस्था, हिन्दू-मुस्लिम समस्या, छुआछूत की समस्या, किसान-जमींदार संघर्ष आदि मुखरित किया है। आप पर गांधीवादी दृष्टिकोण है।[96] समस्यामूलक एकांकियों की दृष्टि से आपके 'धोखेबाज', 'ईद और होली', 'मानव मन' तथा 'मैत्री' उत्तम हैं। प्रभाव की दृष्टि से 'कंगाल नहीं' और 'मानवमन' सफल रचनाएँ हैं।

सेठजी की राजनीतिक एकांकी प्रायः जेल में लिखे गये हैं। यह उनकी उल्लेखनीय विशेषता है।[97] ऐतिहासिक एकांकियों में 'बुद्ध की एक शिष्या', 'बुद्ध के सच्चे स्नेही कौन?', 'जालौक और भिखारिणी', 'चन्द्रापीड़ और चर्मकार', 'सहित या रहित', 'अठानवे किसे', 'अपरिग्रह की पराकाष्ठा', 'चैतन्य का सन्यास', 'नानक की समाज', 'शिवाजी का सच्चा स्वरुप', 'तेग बहादुर की भविष्य वाणी', 'पतन की पराकाष्ठा', 'निर्दोष की रक्षा', 'बाजीराव की तस्वीर', 'सच्चा धर्म', 'सच्ची पूजा', 'प्राचश्चित', 'भय का भूत', 'वे आंसू', 'सुदामा के तन्दुल', 'कृष्णाकुमारी', 'अजीजन', 'अजीबोगरीब मुलाकात', 'महर्षि की महत्ता', 'परमहंस का पत्नी प्रेम', 'सूखे संतरे' आदि हैं। एकांकियों में गांधीयुग की राजनीतिक समस्याओं का चित्रण, स्वार्थी मिनिस्टर, रंगे सियार, काउन्सिल के मैम्बर, देशभक्ति तथा जनसेवा का स्वांग भरकर अपना उल्लू सीधा करने वाले अवसरवादी, स्वार्थी और यशोलिप्सा को आदर्श बनाने वाले नेताओं आदि पर राष्ट्रीय नैतिक बल द्वारा आपने सफल व्यंग्य किया है। यथार्थ का दिग्दर्शन कराने के साथ आदर्श की ओर संकेत करना आपका उद्देश्य है। विचार पक्ष में चिन्तनशील होते हुए भी सेठजी आदर्शवादी हैं। सामाजिक एकांकियों में व्यंग्य के साथ किसी न किसी रुप मे एक स्वस्थ आदर्श की सृष्टि है। ऐतिहासिक एकांकियों में आपका आदर्श अधिक स्पष्ट हो गया है। 'कंगाल नहीं', 'सच्चा काँग्रेसी कौन?', 'पाप का घडा' आपकी सत्य घटनाओं पर आधारित एकांकी हैं। 'शाप या वर', 'प्रलय और सृष्टि', 'अलबेला', 'सच्चा जीवन' नामक एकपात्री एकांकी स्वीडन के प्रसिद्ध नाट्यकार स्ट्रेन्डबर्ग तथा अमेरिका के ओ नील की शैली पर पाश्चात्य टैकनीक का अनुकरण करते हुए रचित हैं। इनका विषय तथा प्रतिपादन भिन्न है। यह आपका हिन्दी साहित्य में सर्वथा नूतन प्रयोग है। आपकी एकपात्री एकांकी चरित्र की आंतरिक गुत्थियों का

विश्लेषण करते हैं। एक ही पात्र के चरित्र के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए मूल भाव के अनुकूल वातावरण की सृष्टि करते हैं। इनके अतिरिक्त 'सिंग पाई लां', 'मुकदेन', 'स्तारिक और बाबुश्की', 'गुलबीबी', 'परों वाले कारखाने', 'इस्तख़तानोफ़', 'दो मूर्तियाँ' आदि वैदेशिक कथाओं पर रचित एकांकी हैं। तथा 'कृषि यज्ञ' पौराणिक एकांकी है।

सेठ जी ने टैकनीक की दृष्टि से अपनी मौलिक प्रतिभा एवं नाटकीय कौशल द्वारा हिन्दी एकांकी में पाश्चात्य टैकनीक का प्रयोग, विशेषतः एकपात्री एकांकी में, बडी कुशलतापूर्वक किया है। साहित्यिकता, सूक्ष्मता, रंगमंचीय विधान, गत्यात्मक कथानक और जीवंत संवाद आपकी टैकनीक संबंधी विशेषताएँ है। इसके अतिरिक्त आंतरिक एवं बाह्य संघर्ष, सरल और स्वाभाविक संवाद,कौतूहलता, व्यापाक, चित्रमय तथा सर्वागपूर्ण रंगसंकेत आदि। 'उपक्रम' तथा 'उपसंहार' के साथ प्रयोग आपकी महत्वपूर्ण देन है। उपक्रम एक प्रकार का प्रवेश है जिसमें पात्रों का परिचय करा दिया जाता है। वस्तुस्थिति एव पूर्व कथा का समावेश इसी में रहता है , भविष्य के घटनाक्रम की एक अस्पष्ट सी कल्पना दर्शक या पाठक के मन में उदित होती है। नाटक के अन्त में उपसंहार की योजना है, जो मुख्य दृश्यों के परिणामों को स्पष्ट करता है। इन दोनों के प्रयोग से एकाकी की सौन्दर्य वृद्धि होती है ऐसा सेठ जी का कहना है।

उपर्युक्त विवेचन के सारांश रुप मे यह स्पष्टतः कहा जा सकता है कि एकाकी के विकास का यह तृतीय सोपान प्रसाद युग अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। देश की संक्रमणकालीन परतंत्रता की परिस्थिति में प्रसाद जी के प्रतिभासम्पन्न व्यक्तित्व ने एकांकी के स्वरुप द्वारा न केवल समकालीन समस्याओ के निराकरण का मार्ग प्रशस्त किया अपितु देश के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक गौरव की स्वर्णिम आभा पुनः चमत्कृत की। प्रसादजी ने अपनी एकांकी कला द्वारा भारतीय नाट्य शैली के साथ पाश्चात्य नाट्य शैली के अद्भूत समन्वय का सफल प्रयोग किया है जो परवर्ती एकांकी रचनाकारों के लिए मार्गदर्शन का काम करता है। आपकी 'एक घूँट' एकांकी उक्त विशेषताओं के कारण एकांकी के विकास मे अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है। समस्याओं के निराकरण में मनोविश्लेषणात्मक जीवनदर्शन, चरित्रों के अंतर्द्वन्द्व, प्रतीकात्मकता आदि प्रसादजी की प्रमुख विशेषताएँ है। प्रसादजी के परवर्ती एकांकीकारों में डॉ रामकुमार वर्मा, सुदर्शन, भुवनेश्वर प्रसाद, जगदीशचन्द्र माथुर, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र, भगवतीचरण वर्मा आदि प्रमुख हैं। इस युग की एकांकियाँ ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं से सम्बन्धित हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा की एकाकी विधा शिल्पात्मक विकास से विशेषतः सम्बन्धित है। एकांकियों की ऐतिहासिक कथावस्तु द्वारा समकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को

बडे प्रभावात्मक रुप से लेखक ने प्रस्तुत किया है। वर्मा जी के सामाजिक एवं पौराणिक एकांकियों की कथावस्तु मध्यवर्गीय मनुष्य के यथार्थ जीवन से गहरा संबंध रखती है। आपकी 'बादल की मृत्यु' नामक एकांकी पाश्चात्य टैकनीक के प्रयोग की दृष्टि से ऐतिहासिक महत्व रखती है। टैकनी की दृष्टि से हिन्दी एकांकी को वर्माजी ने मौलिक संविधान दिया। आपके संकलनत्रय के पूर्ण निर्वहन और एक ही दृश्य में वातावरण चरमसीमा तक पहुँचाने की एक सर्वथा नवीन शैली का प्रवर्तन किया है। तथा एकांकी टैकनीक को सुस्थिर रुप दिया है क्योकि वर्णनात्मकता की अपेक्षा अभिनयात्मकता को प्रधानता देते हैं।

प्रसादयुगीन एकांकी साहित्य का विकास तीव्र गति से हुआ। एकांकीकारो ने सामाजिक, राजनैतिक समस्याओं को अपनाना शुरु कर दिया। एकांकी-कला की दृष्टि से यह युग विशेष महत्वपूर्ण है। डॉ. रामकुमार वर्मा, भुवनेश्वर प्रसाद, डॉ. जगदीशचन्द्र माथुर, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' आदि ने स्वनिर्मित शैली प्रस्तुत की। इन्होंने पाश्चात्य टैकनीक को भलीभाँति पचाया और भारतीय समस्याओं को नये ढॉचे में उपस्थित किया। एकांकी अब यथार्थ के मार्ग पर बढ़ते हुए आदर्श को पीछे छोडने लगी। कथानक के क्षेत्र में सूक्ष्मता को महत्ता दी जाने लगी। समाज की रुढ़िगत, पुरातन मान्यताओं के प्रति सामाजिक परिस्थितियों के भीतर रहकर भी एकांकीकारों ने अपनी विध्वंसात्मक रुख और प्रतिक्रियात्मक स्वर को एकांकियों में उद्घोषित किया है। मानव-मनोविकारों का चित्रण किया तथा मानसिक संघर्षो को एकांकियो के माध्यम से प्रस्तुत किया।

आलोच्य-युग में युग के प्रारंभिक वर्षो में जो एकांकी लिखी गई उनकी शैली शिल्प प्राचीन संस्कृत नाटकों का आधार लेकर चली। उनमें सबसे पहले नान्दी का विधान है, बाद में सूत्रधार और नटी दोनों के वार्तालाप में नाटक का नाम, विषय, लेखक आदि का परिचय आदि दे दिया जाता है। सबके अन्त में भरत-वाक्य भी रहता है। संवादों में गद्य और पद्य का मिश्रित प्रयोग किया गया है।

इसके पश्चात् वह समय आता है जब एक और संस्कृत की शैली का भी थोडा-बहुत प्रभाव है। और दूसरी और पाश्चात्य शैली को भी ग्रहण किया गया है। पाश्चात्य शैली के ग्रहण का परिणाम यह हुआ कि नान्दी, सूत्रधार और नटी की अब कोई आवश्यकता ही नहीं रह गई। नाटक एकदम सीधे ही प्रारंभ हो जाता है और कहीं भरत-वाक्य और कहीं बिना भरत-वाक्य के ही समाप्त हो जाता है। प्रसादजी का 'एक घूँट' ऐसा ही एक एकांकी है। यह एकांकी विकास की मध्यवर्ती अवस्था है। पाश्चात्य प्रभाव तथा उनके अनुकरण से हिन्दी एकांकी के शिल्प में भी भारी परिवर्तन हुआ। एक ओर समस्याओं को उभारा गया तो दूसरी ओर संवादों मे स्वाभाविकता का ध्यान रखा जाने लगा। लम्बे विवेचनात्मक अथवा उपदेशपूर्ण संवादों को अस्वाभाविक माना जाने लगा। कृत्रिमता दूर करने के लिए पात्रों द्वारा कहे गए शेर, दोहे, गीत, नान्दी,

मंगलाचरण, स्वगत, भरत वाक्य का लोप हो गया। स्वाभाविकता के लिए यथार्थता पर बल दिया गया। इसी कारण एकांकियों में प्रयुक्त भाषा सरल, स्वाभाविक तथा दैनिक जीवन में प्रयुक्त भाषा लगती है। अतः एकांकियों का शिल्प विधान और स्वरुप काफी संवर गया।

हिन्दी एकांकी का शिल्पात्मक विकास होने से चरमसीमा, कौतूहल, जिज्ञासा, अन्तर्द्वन्द्व आदि का समावेश एकांकी में अनिवार्य हो गया। संकलनत्रय को विशेष प्रश्रय मिला। छोटे-छोटे चुस्त और उपयुक्त सवाद एकांकियों में आने लगे। पद्यात्मक संवादों का अभाव होने लगा। पद्यात्मक संवादों का पूर्णतया निषेध मिश्रजी की बडी देन है। प्रभाव ऐक्य, कार्य-व्यापार की गतिशीलता और पात्र मनोविज्ञान आदि पर एकांकीकारों ने विशेष ध्यान दिया। विस्तृत रंगसंकेत दिये जाने लगे तथा इनके साथ रंगसज्जा, प्रकाश योजना, रंग-परिधान, ध्वनि-व्यवस्था आदि भी एकांकी के रंगसंकेतों में स्थान पाने लगे। अनावश्यक दृश्यों का कोई स्थान नहीं रहा। पाश्चात्य प्रभाव स्वरुप एकांकी ने अपना नवीन रुप स्थिर किया। वस्तुतः अब वे स्वयं के बल पर एकांकी कहलाने के अधिकारी हो गए। उनका स्वरुप निश्चित हो गया। हिन्दी एकांकी स्वतंत्र सत्ता के रुप में सचेष्ट भाव से लिखे जाने लगे। अतः उनमें विषय की अपेक्षा शिल्प प्रमुख हो गए। शिल्प की प्रधानता होने से उन्हें बौद्धिकता, मनोवृत्तियों का विश्लेषण, संघर्ष, यथार्थता, धीरे-धीरे पद्यमय संवादों का अभाव, चातुर्यपूर्ण संवाद, मार्मिक स्थलों का चयन, रंगसंकेत आदि बढते गए हैं।

द्विवेदी युगीन आदर्शवाद और प्रसाद युग के कल्पना प्रधान चित्रण की प्रवृत्तियों पर युगीन परिस्थितियों का हिन्दी के शीर्षस्थ कवियों, लेखकों का, आलोच्यकाल की साहित्यिक रचनाओं पर व्यापक प्रभाव पडा। पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरुप कोरी भावुकता, कला सौन्दर्य आदि के स्थान पर जनता ने सामयिक एवं सामाजिक संघर्ष से उद्‌भुत विद्रुपताओं को अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता दी। इब्सन के प्रभावस्वरुप एकांकीकारों ने कल्पनालोक की अपेक्षा वर्तमान संघर्षमय जीवन की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक समस्याओं को उभारकर उनका तथाजन्य चित्रण प्रस्तुत किया। पाश्चात्य देशों के नवीन वैज्ञानिक उपलब्धियों के परिणाम स्वरुप एकांकी के क्षेत्र में नवीन प्रयोग एकांकीकारों ने अपनी रचना प्रक्रिया के माध्यम से किया जिनके पीछे तर्क बुद्धि की प्रधानता दृष्टिगत होती है। पाश्चात्य प्रभाव ने आधुनिक भारतीय जीवन-दर्शन को नवीन मोड देकर एकांकी साहित्य में नवीन जीवन-सत्यों को उद्‌घाटित किया है। युगीन एकांकीकारों के मतानुसार युग-युग से प्रसुप्त मानव का व्यक्तित्व के जागने से, पुरानी रुढियाँ, जीर्ण-शीर्ण परंपराएँ, सामाजिक रुढ मान्यताएँ ढीली होकर टूटने लगीं, अंधविश्वासो का अंत निश्चित था। इस युग में युग का दार्शनिक, शाश्वत सांस्कृतिक जीवन को ढकोसला मात्र समझता था क्योंकि मानव मस्तिष्क, मानव चरित्र तथा मानव-मन आदि के विश्लेषण का सूत्रपात हुआ। बाह्य घटनाओं

के स्थान पर आंतरिक घटनाओं की अधिकता विशेष थी। परिणामतः नये मापदंड, नये आयाम प्रस्तुत किये जाने लगे। पाश्चात्य जगत की साहित्यिक और दार्शनिक विचारधारा का अमिट प्रभाव प्रसादोत्तर कालीन अर्थात् नवीन एकांकी साहित्य पर पडने से एकांकियों के कथानकों में मनोविज्ञान के आधार पर पात्रो का मनोविश्लेषण किया जाने लगा। पश्चिमी प्रभाव स्वरुप विचारधारा तथा शिल्प दोनों में नित्य परिवर्तन हुए। पूर्वकाल के एकांकीकार इस समय भी अपनी एकांकी रचना करते रहे। लेकिन उनके अलावा नई पीढ़ी के नये एकांकीकार भी पर्याप्त संख्या मे इस क्षेत्र मे प्रविष्ट हुए जो ठोस कार्यरचना कर रहे है। जिन एकांकीकारों के नाम प्रसादयुग में लिए गए हैं उनकी और उनके अतिरिक्त अन्य एकांकीकारों की तूलिकाएँ मानों वरदान पाकर अविराम गति से नृत्यरत हो उठीं।[98] श्री सद्गुरुशरण अवस्थी ने लिखा है कि- "आधुनिक काल में अंग्रेजी साम्राज्य के प्रसार के साथ पाश्चात्य प्रभाव का जो प्रभंजन आया, वही इस साहित्यिक रुप के विकास को अवरुद्ध करने वाली शक्तियों को समाप्त करके उसकी प्रगति के लिए उचित वातावरण उत्पन्न कर सका।[99] इस प्रकार आधुनिक एकांकीकारों के दृष्टिकोण में पाश्चात्य साहित्य के अध्ययन से भाव, भाषा, आदर्श सभी में अनुकरण की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है।

आधुनिक एकांकियों में अभिव्यक्त मूल विचार धाराओं में यथार्थवाद मुख्य रुप से उभरकर हमारे समक्ष आया है। आज हमारे जीवन को सर्वतोन्मुखी चित्रण हो रहा है। बिल्कुल सामयिक समस्याओं, प्रश्नों, सत्यों और आवश्यकताओं ने एकांकीकारों को आकर्षित कर लिया है और इस स्थूलता से उन्हें प्रकट भी करने लगा है।[100] संस्कृति की व्याख्या, इतिहास और राष्ट्रीयता के प्रति आस्था, दैनिक जीवन की समस्याओं का समाधान आज की एकांकियों में वर्णित हो रहा है। आज का एकांकी साहित्य समाज की जर्जरित रुढियों का पर्दाफाश कर जन साधारण के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित कर रहा है। अतैव आधुनिक एकांकी समाज की समस्याओं की विस्तृत व्याख्या, नवीन तत्वों की ओर संकेत, बुद्धिगत प्रतिपादन और जन साधारण की जीवन व्याख्या कही जाय तो समीचीन होगा। आधुनिक एकांकीकारों ने प्राचीन सस्कृति तथा आदर्शो के पुनर्निमाण का भी प्रयास किया है। एकांकियो का मूल आधार प्राचीन भारतीय कथाओं के आदर्श नायकों और घटनाओं का पुनर्मूल्यांकन है। आधुनिक एकाकी की सबसे बडी विशेषता यह है कि उन्हें वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रदर्शित किया गया है।

नवीन अर्थात् प्रसादोत्तर युग मे रेड़ियो एकांकियों की माग बढी। रेड़ियो एकांकियाँ निखरकर सामने आने लगी। अधिकांशतः एकांकीकारों ने इसकी रचना प्रारंभ कर दी क्योंकि यह युगीन माँग थी। समयाभाव जो एकाकी उदय में सर्वथा सबसे प्रबल कारण रहा है। अतः यही कारण रेडियो एकांकी के जन्म मे भी

महत्वपूर्ण लक्षण रहा है। रेडियो एकांकी श्रव्यसाधन अर्थात् आकाशवाणी के प्रसारण के माध्यम से जनता के समक्ष प्रस्तुत की जाती रही और इसका प्रचार-प्रसार और भी तीव्र गति से हुआ। रेडियो ने अनेक एकांकी नाटककारों को जन्म दिया है और हिन्दी एकांकी को विकास के पथ पर आगे बढाया है। रेडियो टैकनीक के सम्बन्ध में डॉ. वर्मा ने विस्तार से लिखा है।[101] इनकी निजी विशेषताएँ हैं। प्रत्येक का स्वतत्र व्यक्तित्व, पृथक विचारधारा एवं अलग क्षेत्र हैं। सभी छोटे-बडे एकांकीकारों ने रेडियो एकांकियों की रचनाएँ कीं। इससे रेडियो एकांकी कला अपने पौढतम एवं मनोहारी रुप में उभरकर, निखरकर सामने आया। परिणामस्वरुप कुछ नए तत्व आ गए स्टेज-इफेक्ट (Stage-Effect) के लिए कुछ देर तक रुकने का पृष्ठभूमि संगीत का और ग्रामोफोन रेकार्डो आदि की सहायता ली जाने लगी। ध्वनि-निर्देश आवश्यक हो गए। पात्र कम होने लगे। यदा-कदा ही अब सूत्रधार की आवश्यकता पडती है।

पाश्चात्य ढंग के मनोविश्लेषण प्रधान एकांकियो का सूत्रपात करने का श्रेय गणेश प्रसाद द्विवेदी जी को है। आपके एकांकियों में भारतीय सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है जिसे सामाजिक व्यंग्य के द्वारा समाज की जीर्ण-शीर्ण परंपरा को एकांकियों के माध्यम से उद्घाटित आपकी एकांकियॉ हैं - 'सोहागबिन्दी', 'वह फिर आयी थी', 'परदे का अपर पार्श्व', 'शर्माजी', 'दूसरा उपाय ही क्या है', 'सर्वस्व अर्पण', 'कामरेड', 'गोष्ठी', 'दगा', 'परीक्षा', 'रपट', 'टैगोरदिवस', 'रिहर्सल', 'धरती माता' आदि। आपके अधिकांश एकांकी सामाजिक होने के साथ किसी निगूढ सैक्स समस्या को लेकर चले हैं। भारतीय समाज की प्रेम या काम-वासना विषयक धारणाओं को उन्होंने पाश्चात्य कसौटियों पर परखा है। द्विवेदी जी ने आधुनिक हिन्दू समाज की दूषित विवाह पद्धति के नाना प्रकार के विषम रुप को दिखाते हुए उन्हें अपने एकाकियों में व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। आपने विशेषतः स्त्री-पुरुष के पारस्परिक यौनाकर्षण, प्रेम वैषम्य, आधुनिक विवाह की कमियाँ, मानसिक जटिलताएँ आदि को मुख्यतः एकांकी का विषय बनाया है।[102] आप पाश्चात्य पद्धति से विशेष रुप से प्रभावित हैं। आपने इसी आधार पर सकेतात्मक शैली का प्रयोग एकांकियों मे किया है। किसी-किसी एकाकी में तो यह प्रभाव स्पष्टतः मुखरित हुआ है। एकाकियों में दृश्यों की संख्या अधिक है। 'सोहाग बिन्दी' में ग्यारह दृश्य हैं। संकलनत्रय का अभाव कहीं-कही दिखाई देता है। 'सोहाग बिन्दी' छोटा-सा नाटक प्रतीत होता है। कमियों, रुढियों के बावजूद एकांकी के विकास मे द्विवेदी जी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

श्री गिरीजाकुमार माथुरजी का एकाकियों की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आपकी सांस्कृतिक एकाकियो में है -'कुमार संभव', 'शकुंतला', 'मेघ की छाया', 'श्रृतुसंहार', 'इन्दुमती', 'शांति की पुकार', 'राम की अग्नि परीक्षा', 'गीत गोविन्द', 'धरा दीप'आदि हैं। इन एकांकियों में कालीदास की रसमय सौन्दर्य

भरी आत्मा का चित्रांकन है। सामाजिक मनोवैज्ञानिक एकांकियों में हैं - 'जन्म कैद', 'पिकनिक', 'मशीनोत्सव', 'व्यक्तिमुक्त-धरामुक्त', 'राम की अग्नि परीक्षा', 'अमर रहे आलोक', 'खून की रेखाएँ', 'बहती जा दामोदर', 'लाउड स्पीकर', 'मध्यस्थ', 'बारात चढ़े' आदि आते है। माथुरजी की एकांकियों में निहित समस्याएँ व्यष्टि और समष्टि दोनों रूपों मे समाज को छूती हैं। ऐतिहासिक एकाकियों में 'विक्रमादित्य', 'विषपान', 'वासवदत्ता', 'क्रांतिपथ' आदि हैं। प्रतीकात्मक एकांकियों के अन्तर्गत 'रस की जीत', 'शांति विश्वदेवा', 'मदनोत्सव', 'बसन्त की चॉदनी', 'बकुलमुकुल' आदि प्रतीकात्मक एकांकियों की रचना माथुरजी की विशेषता है। इस दिशा में आप पथ प्रदर्शक रहे हैं।[103]

श्री पृथ्वीनाथ शर्मा की रचनाओं का मूलाधार आज के शिक्षित मध्यवर्ग के जीवन और रोमान्स का चित्रण है। शर्माजी की एकांकी रचनाएँ हैं - 'वैज्ञानिक की पत्नी', 'छोटी बात', 'भूल और विजय', 'साध', 'मुक्ति', 'दुविधा', 'अपराधी', 'सौन्दर्य प्रतियोगिता' आदि हैं। शर्माजी ने शिक्षित मध्यवर्ग के जीवन को अपने सामाजिक एकांकियों का आधार बनाया है तथा उनकी नाना सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं को चित्रित किया है। आपका मूल विषय सैक्स है जिसके चतुर्दिक समाज की अनेक समस्याएँ अवगुंठित हैं अर्थात् जुडी हुई हैं। आपने आधुनिक शिक्षित नारी को हर पहलू से देखा है और उन्हें अपने एकांकियो में मनोवैज्ञानिक रुप से चित्रित करने का प्रयत्न किया है। स्त्री-पात्रों में जहॉ आंतरिक चरित्र की दृढ़ता है, वहाँ उनके फैशन, बनाव श्रृंगार की ओर भी आपकी सूक्ष्म दृष्टि है। आपकी एकांकियों में पुरुष-पात्र बहुत ही आदर्शवादी और कहीं-कहीं व्यक्तित्वविहिन रुप में चित्रित हुए हैं। स्त्रियों के वैवाहिक जीवन की गुत्थियाँ, स्वच्छन्दता और आंतरिक इच्छाएँ, स्वतंत्र जीवन की रंगीनियाँ आदि को अपनी एकांकियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। शर्माजी की सबसे बडी सफलता उनकी एकांकी टैकनीक है। वे पाश्चात्य के आधुनिकतम तत्वों से प्रभावित हैं।[104] आपकी एकांकियों में विस्तार है। संवाद संक्षिप्त और मर्मस्पर्शी है।

श्री गोविन्द वल्लभ पंतजी ने ऐतिहासिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, हास्यरसात्मक, व्यंग्य आदि व्यापक तथा विस्तृत विषयों को लेकर एकांकी रचनाएँ की हैं। 'एकाग्रता की परीक्षा', 'विषकन्या', 'भस्मरेखा', 'दो वर और एक शाप', 'अवन्ती की कुबडी' आदि आपके ऐतिहासिक, पौराणिक एकांकियाँ है। 'खूनी लोटा', 'अपराध मेरा ही', 'साक्षात्कार', 'काला जादू', '104 डिग्री', 'पर्दा तोडक क्लब', 'विष का दांत', 'बडे दिन का शिकार' आदि रचनाएँ सामाजिक कुरीतियों की ओर संकेत है। पंत जी हास्य-व्यग्य परिस्थितियों के सृजन कला में अपनी विशिष्ट महत्ता रखते हैं। आपने अपने एकांकियों में जीवन की यथार्थता का अंकन किया है। 'खूनी लोटा', 'विष कन्या' और 'अपराध मेरा ही' आपकी उत्तम रचनाएँ है। 'एक सौ चार डिग्री',

'अपराध मेरा ही', 'विषकन्या' मनोवैज्ञानिक एकांकी हैं। इनमें मानव-मन के गूढ़-रहस्यों को उद्घाटित किया गया है। दृश्यों तथा पात्रों का उचित समन्वय पंतजी की सफलता का राज है। विषय का चुनाव और कथानक का विकास आपकी एकांकियों में उल्लेखनीय हैं। सर्वथा सरल, प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग किया है।

नवीन शिल्प का प्रयोग एकांकीकार डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल ने अपनी ऐतिहासिक, पौराणिक तथा सामाजिक एकांकियों मे जीवन की विद्रुपताओं को अंकित करने के लिए मुख्यतः भावना को अपनी अनुभूति के साथ एकांकियों में अभिव्यक्त किया है। आपकी सामाजिक एकांकियों में 'सुबह होगी', 'पर्वत के पीछे', 'पाप और प्रायश्चित', 'मंडवे का मोर', 'नई इमारत', 'कैद से पहले', आदि प्रसिद्ध रचनाएँ हैं तथा 'जहाँ आरा का स्वप्न', 'महाकाल का मंदिर', 'नूरजहाँ की एक रात', 'ताजमहल के ऑसू' आदि उनकी ऐतिहासिक कथानक को लेकर है। 'शरणागत' एकांकी पौराणिक आख्यान को लेकर है। एकांकियों के संवादों में वाक् चातुर्य तथा युगीन तडप दृष्टिगत होता है।

एकांकीकार श्री रावी एक मौलिक चिन्तक एवं स्वतंत्र विचारक हैं तथा पुरातन मान्यताएँ और रुढ़ियों के विरुद्ध नवीन जीवन दर्शन को ही एकाकियों में महत्ता देते हैं। 'रेस्तांरा' आपकी राजनीतिक एकांकी है। इसमें हिटलर तथा अन्य राष्ट्रों के दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया है। आपके एकांकी सूक्ष्म जगत और जीवन संबंधी विषय की दृष्टि से सर्वथा नवीन और मौलिक प्रयोग हैं जिनमें बौद्धिक विचार प्रतिपादन, संक्षिप्त रंगमंच की सूचनाएँ मुख्य तत्व हैं तथा सुपाठ्य और विचारपूर्ण तत्वों से एकांकियाँ परिपूर्ण हैं।

प्रो. डी एम. बोरगांवकर ने शॉ की विस्तृत पद्धति का अपनी एकांकियों में प्रयोग करते हुए एकांकियों की रचनाएँ की हैं। आपकी राजनीतिक एकांकियो में राजनीतिक घटनाओं की मार्मिक व्यग्यात्मक झांकी को लेकर – 'पन्द्रह अगस्त', 'छः अगस्त', 'तीस जनवरी', 'शरणार्थी' आदि हैं जिनमें भारत विभाजन तथा उससे उत्पन्न साम्प्रदायिक विषमताएँ, शरणार्थियों के जटिल प्रश्न, पाकिस्तान से युद्ध की संभावना, एटम बम का दुरुपयोग, जनता की विक्षुब्ध मानसिक अवस्था, तानाशाही शासन की मीमासा आदि हैं। सामाजिक आदर्शवाद को लेकर उनकी 'मंदिर का प्रवेश', 'अंधा' आदि एकांकियाँ है जिनमें सामाजिक विद्रुपताओं को उभारते हुए नाट्यकार ने अछूतोद्धार पर अधिक जोर दिया है। वे मानते हैं कि अछूतो के प्रश्न का अभी केवल राजनीतिक हल ही हुआ है। आपने विषयों में विविधता, राजनीतिक उथल-पुथल, गांधीवाद को बुद्धिवाद की कसौटी पर परखते हुए इसे सबसे ज्यादा मानवीय पहुँच विवेचित किया है। आपकी विचारधारा

में अतिमानववाद तथा स्त्रियों का ओज, वीरत्व और साहस, सुपरमैन अर्थात् अतिमानववाद में आपका विश्वास है जो नीत्से से प्रभावित है। दुखान्त नाटकों को प्रस्तुत करने हेतु हल्के से गंभीर वातावरण पर आना, दो विभिन्न मनःस्थितियों का विरोध दिखाना आपकी विशेषताएँ हैं। प्राचीन संस्कृत आदर्शो के विरुद्ध आपने स्टेज की मान्यताओं को विस्तृत किया है।

डॉ सत्येन्द्र की प्रथम एकांकी 'कुणाल' अभिनय के उद्देश्य से लिखी गई थी।[105] यह कुणाल के जीवन पर आधारित है। 'कुणाल' एकांकी में संकलनत्रय का निर्वाह नहीं हुआ है। नौ सरस गीत और 11 दृश्य हैं। इसमें आधुनिक एकांकी-कला का पूर्णतः निर्वाह नहीं हुआ है किन्तु धीरे-धीरे निरंतर उनकी एकांकी-कला का विकास होता गया। विषय की दृष्टि से आपकी एकांकियों में राष्ट्रीय, ऐतिहासिक तथा आदर्शवादी चेतना के दो रुप मिलते हैं। राष्ट्रीय ऐतिहासिक एकाकियों में 'कुणाल', 'विक्रम का आत्मेघ', 'प्रायश्चित' तथा 'स्वतंत्रता का अर्थ' आदि रखे जा सकते हैं। सामाजिक आदर्शवादी चेतना के अन्तर्गत 'बलिदान' जिसमें दहेज प्रथा का चित्रण है। 'वसन्त' के अन्तर्गत पूँजीवादी आर्थिक शोषण के दुष्परिणाम को बताया गया है। 'मानव उद्धार' मे संसार में व्याप्त मिथ्याचार के विरुद्ध आवाज उठाई गई है। सत्येन्द्रजी ने 'स्वतन्त्रता का अर्थ' एकांकी में नवीन प्रयोग किया है। एक ही विस्तृत दृश्य तथा जीवन से जुड़ा हुआ कथानक को लेकर एकांकियाँ लिखी हैं। मुख्यतः आपने अपनी एकांकियों में जर्जर समाज की अवस्था को उभारकर दिखाया है। आपकी एकांकियों में विस्तार है। संवाद विस्तृत हैं एवं संवेदना में मौलिकता है।

प्रो. सदगुरुशरण अवस्थीजी की एकांकियो का मूल आधार आदर्शवाद की प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान है।[106] आपने अपना आदर्श प्राचीन और अर्वाचीन का वैज्ञानिक सामंजस्य रखा है। आपकी प्रमुख एकांकियाँ हैं- 'सुदामा', 'कैकयी', 'शम्बूक', 'विभीषण', 'ध्रुव', 'प्रहलाद', 'शकुंतला', 'तुलसीदास', 'अहिल्या', 'सती का अपराध', 'त्रिशंकु', 'बलिवामन', 'वैराग्य', 'एकलव्य', 'महाभिनिष्क्रमण', 'हॉ में नहीं का रहस्य', 'ईश्वर' आदि हैं। अवस्थीजी इन एकांकियों में पुरातन, पौराणिक तथा धार्मिक चरित्रों को मौलिक ढंग से नवीन तर्क, विचार, आदर्श तथा नैतिक तत्वों सहित प्रस्तुत किया है। अनेक नवीन विचार-धाराओं का समावेश किया है। अतः प्राचीन स्वरुपों का नवीन मूल्यांकन तथा आज की समस्याओं की बुद्धिवादी तर्कपूर्ण आलोचना आपके एकांकियों में यत्र-तत्र विद्यमान है। अवस्थी जी दार्शनिक हैं। अतः आपके नाट्य साहित्य में सर्वत्र गंभीरता और चिन्तन की प्रधानता है। दार्शनिक विवेचना में आप प्रसाद की पद्धति से विशेष प्रभावित हैं। आपके एकांकी-साहित्य की सबसे बडी विशेषता ऊँची चिंतना, बुद्धिवाद, नवीन तर्क और दार्शनिक गहनता का प्रवेश है जो पग-पग पर हमें सोचने विचारने को बाध्य करता है।[107]

प्रो जयनाथ नलिन ने पाश्चात्य एकांकीकारो में जे.ओ. फ्रांसीस के नाटकीय तत्वों को हिन्दी में लाने का प्रयत्न किया है। सूक्ष्म अनुभूति, यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण, समाज के वस्तुवाद तथा विद्रुपताओं के प्रति तीखा व्यंग्य आपकी एकांकियों में है।[108] नलिन जी मानववादी एकाकीकार है अतः आपकी कला का उद्देश्य मानव है। आपकी एकांकियों में 'जीवन का विकास', 'प्राणों का उल्लास', 'मानव के तन-मन', 'लोमडियों का शिकार', 'लखनवी बहादुर', 'नवाब साहब का इंसाफ', 'बटेरों के शौकीन', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'बड़े आदमी' आदि हैं। आपके सभी प्रहसन अभिनेय योग्य हैं तथा इसमें आपने बडे व्यग्यात्मक चित्र खींचे हैं। राष्ट्रीय चेतना को लेकर 'परमात्मा का पश्चाताप', 'युद्ध के बाद', 'विद्रोही', 'गिरफ्तारी', 'देश की मिट्टी', 'लाल दिन' आदि हैं। इन राष्ट्रीय रचनाओं में नलिन जी की कुछ सृजनात्मक प्रवृत्ति स्पष्ट होती है। देश की स्वतंत्रता, उसके लिए किया हुआ बलिदान, सर्वोच्च त्याग, सतत उद्योग की आवश्यकता आदि के महत्वों को अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रतिपादित किया है। रेडियो एकांकियों मे - 'मेहमान', 'फिल्मी कहानी', 'सागर तट पर', 'लॉटरी', 'अभिशाप', 'डेमोक्रेसी', 'बाबू उधारचन्द' आदि हैं। आपके लंबे व्यंग्यात्मक एकांकियों में 'संवेदना सदन', 'शांति सम्मेलन', 'वर निर्वाचन', 'नेता', 'मेल मिलाप' आदि हैं।

'संवेदना सदन' नलिन जी की परिष्कृत तथा उच्चकोटि की रचना है जिसमें आपका व्यंग्यात्मक स्वरुप अपने समस्त कटीले, सक्रिय और विद्रोही रुप में प्रकट हुआ है। इसमें समाज की कृत्रिमता, खोखलापन, झूठा दिखावा, फॉरमेलिटी आदि का पर्दाफाश किया है तथा व्यक्ति, समाज, सभ्यता, कला, संस्कृति और नाटक के पात्रों पर भी मीठा व्यंग्य है। नलिन जी का व्यंग्य स्थिति में नही परिस्थिति में हैं।[109] इसी प्रकार 'शांति सम्मेलन' में आपकी कला का विकास ऊँची चोटी पर है। निर्देशक एवं अभिनेता होने के कारण आपके एकांकी अभिनय दृष्टि से सफल हैं। वे मूल भावना को टैकनीक से अधिक महत्ता देते हैं तथा आपकी एकांकियों में टैकनीक स्वस्थ एवं सबल रुपों में व्यक्त हुआ है। रंगसंकेतों से नलिन ने चरित्र प्रकाशन का काम लिया है। ये संक्षिप्त और अभिनयक्षम हैं। पात्रों के अनुसार परिचय देना आपकी विशेषता है। नलिन जी की नाट्यकला में वातावरण, सवाद, स्थितियाँ, परिस्थितियाँ सभी नाटक की अन्तवृत्ति और समाजगत या व्यक्तिगत चरित्रोद्घाटन के लिए हैं।[110]

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक आदि विविध प्रकार के विषयों और समस्याओ को लेते हुए एकांकियों तथा रेडियो रुपकों की रचनाएँ की हैं। 'विजेता', 'संघमित्रा', 'सिंहलविजय',

'नेत्रदान', 'तथागत', 'आम्रपाली', आदि एकांकियों में ऐतिहासिक घटना का सर्वथा नवीन विश्लेषण है। ये पौराणिक कथाएँ तर्कसम्मत हैं। सामाजिक कथानक को लेकर 'नया समाज', 'रामराज्य', 'अमर ज्योति', 'गांव का देवता', आदि उल्लेखनीय रेड़ियो एकांकी हैं। 'सीता की माँ' एकांकी हिन्दी का नवीनतम पॉच दृश्यों में स्वोक्ति रुपक है। इसमें जंगल में रहनेवाली नारी के उदर से सीता जी का जन्म और घास फूंस में ढकी हुई राजा जनक को प्राप्त होना सर्वथान नवीन कल्पना है तथा यह तर्कसम्मत रुप में प्रस्तुत है। 'नया समाज' में नए समाज के जन्म की ओर नई टेकनीक के माध्यम से संकेत है। आपकी एकाकियो में विषय-चयन की दृष्टि से व्यापकता, विविधता और विस्तार है तथा एकांकियों के कथानक, मुख्य भाव तथा व्यंजनाएँ और पात्रों के मनोभाव का चित्रण सर्वत्र मौलिक और प्रभावशाली दृष्टिगत होते हैं। आपकी एकांकी की शैली रंगमंचीय है तथा एकसूत्रता आपकी विशेषता है।

चन्द्रकिशोर जैन जी जीवन के व्याख्याता थे। अतः इन्होंने अपनी एकांकियों में मनुष्य को मनुष्यता की उच्चतम सीमा पर अधिष्ठित करने का सफल प्रयत्न किया है। आप बंगला नाटकों से विशेष प्रभावित रहे हैं।[111] रेडियो से प्रभावित होकर अंग्रेजी टेकनीक पर 'रहनुमा' लिखा। इसके बाद 'नींद एवं रानी'। आपकी प्रमुख एकांकियाँ हैं - 'नेपोलियन की विजय का रहस्य', 'विषकन्या', 'हीरे का टुकड़ा', 'पहली भेंट', 'कानून', 'इंसाफ', 'अस्पताल का कमरा', 'भगवान बुद्ध की चरण धूलि', 'रावी', 'भूत की शादी', 'सिराज', 'बसेरा', 'विद्रोही' आदि। 'विषकन्या' भारत के विभिन्न रेडियो स्टेशनों से प्रसारित एकांकी है।[112] नारी की विवशता और अजेय प्रतिहिंसा का अद्भुत चित्रण है। इसमें सिद्धांत और वास्तविकता, आदर्श और यथार्थ, कोरी नैतिकता और प्रेम के संघर्ष तथा वासना की दलित अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।[113] 'विषकन्या' एकांकी पर प्रसाद के 'स्कन्दगुप्त', भगवतीचरण वर्मा की 'चित्रलेखा' तथा बच्चन की कृतियों की स्पष्ट छाप है।[114] आपकी 'नेपोलियन की विजय' एकांकी सबसे उज्जवल, स्पष्ट एवं भव्य है। 'कानून' एकांकी समस्यामूलक है। इसमें अपराधी की समस्या का चित्रण और हमारे सामाजिक विधान पर एक तीखा व्यंग्य है। अभिनयक्षम संवादों और चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक गहराई, संस्कृति की स्वाभाविकता, पूर्ण सावधानीपूर्वक शब्दों का चयन आदि आपकी एकांकियों की विशेषताएँ हैं।

श्री गोविन्द शर्मा कुशल अभिनेता और निर्देशक हैं। आपकी एकांकियॉ नवीन दृष्टिकोण और समस्याओं को लेकर यथार्थवादी होने के साथ आदर्शोन्मुख हैं। आज की सामाजिक दशा को दृष्टि मे रखते हुए सामाजिक कुरीतियों एवं बुराइयों के प्रति लेखक की दृष्टि सदैव जागरुक रही है। आपकी पौराणिक एकांकियों मे - 'लक्ष्मण परित्याग', 'महारथी कर्ण', 'जय गिरीराज', 'नारी का दान' आदि है। राजनीतिक

कथानक को लेकर 'पॉच मार्च की शाम', 'पागलपन', 'टीपू का अंत' हैं तथा सामाजिक एकांकियों में हैं - 'उत्तरदायी कौन', 'सूर का अवसान'। 'सूर का अवसान' एक साहित्यिक एकांकी है जो आज तक की एकांकी परंपरा से भिन्न अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है।[115] यह लेखक की सर्वोत्कृष्ट रचना है। रगमंचीय संकेतों पर विशेषतः ध्यान, अधिकांशतः एक ही दृश्य में एकांकी आपकी विशेषता है। एकांकियों की भाषा सजीव एवं पात्रोनुकूल तथा रोचक और स्वाभाविक संवादों का प्रयोग आपने सर्वत्र किया है।

श्री देवीलाल सामर जी स्वयं उच्चकोटि के कलाकार, नाट्यकार, अभिनेता और नायक हैं। हिन्दी में प्रथम बार अभिनेय योग्य एकांकियों का प्रचलन आपकी नाट्यविशेषता है। जिनमें गतिमान कथानक और जीवित कथोपकथन का निजी सौन्दर्य है तथा आधुनिक विचारों एवं समस्याओं का आधुनिक ढंग से प्रतिपादन किया गया है। सामाजिक व्यंग्यात्मक वर्ग के अन्तर्गत 'वल्लभ', 'तवायफ के घर ब्रगावत', 'मृत्यु के उपरांत', 'उपन्यास का परिच्छेद', 'अमीरों की बस्ती', 'कलजुग', 'परित्यकता', 'अछूत', 'स्वतंत्र्य दिवस' आदि हैं। आध्यात्मिक एकांकियों में 'आत्मा की खोज', 'ईश्वर की खोज', ऐतिहासिक आदर्शवादी वर्ग में 'वीर बल्लू', 'ओ नील थोड़ा-सा असवार', 'जीवन दान' हैं। मनोवैज्ञानिक समस्या को लेकर 'समस्या बालक' तथा वैज्ञानिक एवं काल्पनिक वर्ग में 'चन्द्रलोक' आदि को रखा गया है। सामर जी ने अपनी सामाजिक व्यंग्यात्मक एकांकियों के माध्यम से आश्रयहीन तिरस्कृत विधवाओं, समाज के प्रति हो रहे दुर्व्यवहार, छूआछूत, वेश्या, पुरानी जीर्ण-शीर्ण परम्पराएँ, रुढिवादिता तथा परिवारों में होने वाले छोटे-मोटे अत्याचारों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। आध्यात्मिक एकांकियों में आपका गंभीर, विचारशील एवं दार्शनिक व्यक्तित्व मुखरित हुआ है।

प्रेम नारायण टण्डन जी के एकांकी भावपूर्ण तता संकेतात्मक शैली को लेकर निर्मित हैं। आपका दृष्टिकोण आदर्शवादी है अतः समाज सुधार मुख्य ध्येय है। आपकी सामाजिक एकांकियॉ हैं - 'प्रेमी', 'प्रेरणा', 'अधूरा लेख', 'रोगी के बच्चे' आदि हैं। एकांकियों में सामाजिक आलोचना, चुनाव सम्बन्धी भ्रष्टाचार, मिथ्या प्रदर्शन की भावना, बेईमानी, साहित्यिकों की निर्धनता, पारिवारिक चिन्ताऍ, धनिकों का नैतिक पतन, खोखलापन, उपदेशको का खोखला आदर्शवाद आदि ऐसी कई समस्याऍ उठाई गई हैं और उनका उचित सुलझाव भी उपस्थित किया गया है। टंडनजी ने ऐतिहासिक विषयों को लेकर 'गांधार पतन', 'माता', 'दंड', 'कर्मपथ' आदि मार्मिक गीतिनाट्यों की रचना की। आपकी टेकनीक पर अंग्रेजी पद्धति का विशेष प्रभाव है। अभिनेयोचित क्रियाशीलता का कथानक की न्यूनता के कारण प्रायः एकांकियों में अभाव है।[116] टडन जी बुद्धिवादी विचारक हैं। रंग सूचनाएँ व्यापक, विस्तृत तथा पूर्ण रुपेण हैं।

श्री सत्येन्द्र शरत् ने अपनी एकांकियों में पाश्चात्य टेकनीक का पूर्णतः निर्वाह किया है। यथार्थवाद, आडम्बर विहीन मनोवैज्ञानिक चित्रण, प्रभाव व्यंजना हेतु रंगनिर्देश आदि का प्रयोग आपने एकांकियों के माध्यम से किया है। आपकी प्रमुख एकाकियाँ हैं - 'शोहदा', 'गुड बाई', 'अनीता', 'एस्फोडेल', 'प्रतिशोध', 'तार के खंभे', 'खण्डहर', 'वह रात', 'गर्मी और रोशनी', 'उषा की मुस्कान', 'मौत के कतरे' आदि है। आप पर बैरी, इब्सन, शॉ, सामरसेट, मॉम का विशेष प्रभाव है। भुवनेश्वरजी का भी स्पष्ट प्रभाव है। आपने अनेक स्थलों पर परेशानी, उलझन, अन्तर्द्वन्द्व का मनोवैज्ञानिक प्रदर्शन किया है। स्टेज इफेक्ट का आपने विशेष ध्यान रखा है। वातावरण में प्रतीकवाद का बड़ा मार्मिक एवं कलात्मक प्रयोग किया है। क्योंकि सांकेतिक चित्रण, शब्दों का मितव्यय किन्तु भाव प्रकाशन की अद्‌भुत क्षमता आपकी शैली की विशेषताएँ हैं।[117]

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के एकांकी आदर्शोन्मुख यथार्थ को लेकर रचित है। फ्रायड के मनोविज्ञान से आप विशेष प्रभावित हैं। 'वसन्त विभ्राट' आपका प्रहसन है। यह प्रतीकात्मक है और इसमें आधुनिक संस्कृति तथा नारी स्वतंत्रता पर चुभता हुआ व्यंग्य कसा गया है। 'सुदिन्य' मनोवैज्ञानिक रचना है इसमें बौद्धकालीन चित्र हैं। गंभीर चिंतन प्रधान कथोपकथन तथा गीतिनाट्यों में कल्पना की चित्रोपमता तथा संगीत की सरसता का मणिकांचन संयोग है। डॉ. सुधीन्द्र स्वाभावतः कवि हैं। 'खून की होली', 'राखी', 'नया वर्ष-नया सदेश', 'संगम', 'रेवा का राजमुकुट', 'राम-रहमान', 'ज्वाला और ज्योति' आदि पाश्चात्य पद्धति से प्रभावित अभिनय योग्य एकांकियाँ हैं जिनका क्षेत्र राजनीतिक तथा मूल चेतना राष्ट्रीय है। दृश्य नियोजन में आपने विशेष कुशलता का परिचय दिया है। स्त्री-पात्रों की अधिकता है तथा एकांकी के अंतिम प्रभाव के ऊपर आपने विशेष ध्यान रखा है। धर्मवीर भारती की एकांकियाँ मानवजीवन के मार्मिक क्षणों को लेकर उन्हें सुप्त अवस्था से जगाकर उनका मानसिक रुप से उद्वेलित करते हुए 'नदी प्यासी थी', 'आवाज का नीलाम', 'सृष्टि का आखिरी आदमी', 'नीली-झील' आदि सामाजिक एकांकियाँ हैं तथा 'संगमरमर पर एक रात' ऐतिहासिक कथानक को लेकर है। 'सृष्टि का आखिरी आदमी' मे इस आस्थाहीन ध्वंसोन्मुख संस्कृति के नाश की कल्पना के साथ नवीन सृष्टि का स्वप्न है।[118] यह सर्वथा नवीन एवं अभूतपूर्व टैकनीक को लेकर ध्वन्यात्मक एकांकी है। 'नीली झील' एकांकी मे जापानी नौ नाटकों की टैकनीक का प्रवेश है। मूल भावना या संवेदना को पूरी तरह उभारने में आप विशेष सिद्धहस्त हैं। रंगमंचीय निर्देश, भाषा की मार्मिकता, संवादों का प्रवाह, आकस्मिक परिवर्तन, पात्रों अन्तर्द्वन्द्व और घटनाओ की तीव्रता डॉ भारती की नाट्यकला की विशेषता है।[119]

डॉ. सरनाम सिंह शर्मा 'अरुण' ने विकासमय संवेदना का मार्ग ग्रहण करते हुए 'नन्दिग्राम का तपस्वी', 'साधना', 'एकावली', 'परित्याग', 'स्वर्गपतन', 'तपस्विनी', 'सत्य का दण्ड' आदि एकांकी सग्रहों की अपनी विशाल और व्यापक अनुभूतियों, स्थूल से सूक्ष्म के प्रति निरंतर प्रयत्न, अंतसंघर्ष का चित्रण, भावात्मक आनन्द की प्रतीति द्वारा रचना की है।[120] ये एकांकियाँ सामाजिक, पौराणिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक एवं हास्य व्यंग्यमय कथानकों को लेकर है। आपकी मनोवैज्ञानिक एकांकी 'ममता' और 'साधना' विशेष उल्लेखनीय हैं। 'ममता' में नारी के वात्सल्यमय ममत्व तथा 'साधना' मे विरह और व्याकुलता का चित्रण है। मानव के अन्तर्जगत् का चित्रण आपकी एकांकी साहित्य की विशेषता है। भाषा क्लिष्ट, रंगसंकेतों की न्यूनता, दृश्यो की अधिकता, अभिनयोचित गुणों का अभाव आपकी एकांकियों में है।

श्रीमती विमला लूथरा ने एकांकियों के विषय में पूर्णतः सहयोग दिया है। आपने अंग्रेजी टैकनीक से प्रभावित व्यंग्यरुपेण, आज के उच्च मध्यवर्गीय समाज का चित्रण अपनी एकांकियों - 'गृह लक्ष्मी', 'मुन्ने का नामकरण', 'प्रतीभोज', 'टाट और सुतली', 'धोबी का आगमन', 'सगाई का प्रबंध', 'लाइनक्लीअर', 'आल इंडिया रेडियो पर तानसेन', 'टिकिट चेकर', 'आठवॉ आश्चर्य', 'बलिदान', 'कला के दावेदार', 'काश्मीर की सैर', 'बचपन का फेर', 'हीरोइन', 'कलाकार और नारी', 'आवागमन' में किया है। व्यंग्य और कटाक्ष का नवीनतम प्रयोग आपकी कुशलता का परिचायक है। आपने यथार्थवादी शैली द्वारा मध्यवर्ग के सामाजिक और सार्वजनिक जीवन, दिखावे, मिथ्याचार तथा कृत्रिम खोखलापन की जड़ों तक पहुँचकर हास्यमिश्रित व्यंग्य के साथ उन्हें उभारा है। अतः आपकी एकांकियाँ अभिनयक्षम है।

मानववादी एकांकीकार श्री विष्णु प्रभाकर जी यथार्थ की भित्ति पर ही आदर्श की स्थापना करते हैं तथा अपनी कला और अभिव्यक्ति के प्रति ईमानदार रहने के लिए सदा प्रयत्नशील रहे हैं। राष्ट्रीय क्राति और भारत की राजनीतिक हलचलों का चित्रण, गाँधीवादी विचारधारा का प्रतिपादन और सामाजिक विद्रुपताओं का चित्रण आपकी कुछ विषयगत विशेषताएँ हैं। सामाजिक समस्याओं को लेकर 'बंधनमुक्त', 'पाप', 'साहस', 'प्रतिशोध', 'इंसान', 'देवताओ की घाटी', 'वीर पूजा', 'चन्द्रकिरण', 'रक्त चंदन', 'माँ', 'दूर और पास', 'किरण और कुहासा', 'नए पुराने', 'श्वेत अंधकार', 'भगवान', 'नया समाज', 'विचार और कर्म' आदि हैं। मनोवैज्ञानिक शैली पर 'ममता का विष', 'भावना और संस्कार', 'उपचेतना का छल', 'मै दोषी नही हूँ', 'हत्या के बाद', 'माँ बाप', 'एक ही नॉव में', 'मुरब्बी', 'प्रेयसि पहले', 'रहमान का बेटा',

'मानव', 'दोराहा', 'रात दस बजे', 'जज का फैसला', 'दो किनारे', 'दरिन्दा', 'सवेरा' आदि हैं। राजनीतिक कथानक को लेकर 'बीमार', 'क्रांति', 'कॉग्रेसमैन बनो', 'हमारा स्वाधीनता संग्राम', 'शरीर का मोल' एकाकियाँ हैं। हास्य-व्यंग्य प्रधान प्रहसनों में 'प्रो लाल', 'गीत के बोल', 'मूर्ख', 'सरकारी नौकरी', 'पुस्तक कीट', 'कार्यक्रम', 'कॉंग्रेस मैन बनो', 'कला का मूल्य', 'दृष्टि की खोज', 'रसोईघर में प्रजातंत्र', 'रिश्तेदार' आदि हैं। आपकी पौराणिक ऐतिहासिक एकांकियों में 'अशोक', 'परिवेदन', 'देवताओं का प्यारा', 'झॉसी की रानी', 'नहुष का पतन', 'कंसमर्दन', 'जनमाष्टमी', 'शिवरात्री', 'गंगा की गाथा' आदि हैं। 'न्याय', 'ईमानदार लडकी', 'सफाई', 'चोर हाट', 'माँ का बेटा', 'समवेदन', 'पुस्तक कीट', 'ऐसे ऐसे', 'होली', 'गुरु द्रोण की पाठशाला', 'भीम और राक्षस', 'हॅस लो गा लो आज दीवाली', 'मोटे लाला', 'दादा की कचहरी' आदि बच्चों के लिए लिखित आपकी एकांकियाँ हैं। विष्णुजी पर गॉधीवाद, युगवाद, प्रगतिवाद, युगीन धर्म की स्पष्ट छाप पड़ी किन्तु इनके बंधन से सर्वथा मुक्त रहे। विचारों की संकीर्णता, पुरातन रुढियों आदि से भी बंधित नहीं हुए।[121] संकलनत्रय की दृष्टि से एकांकियाँ सफल हैं। प्रारंभिक एकांकियो में यद्यपि दृश्यों की अधिकता है किन्तु नवीन एकांकी एक ही दृश्य के हैं। संवाद साधारण संक्षिप्त और अर्थपूर्ण है। रेडियो एकांकियों का आधार की मनोवैज्ञानिकता पर विशेष ध्यान दिया गया है। मनोवैज्ञानिक एकांकियों जैसे 'ममता का विष', 'जहाँ दया पाप है', 'उपचेतना का छल' आदि में स्वगत बडे विशद् और महत्वपूर्ण हैं।[122] आपने बाल एकांकियों में सरल, स्पष्ट भाषा में शिक्षात्मक दृष्टिकोण सामने रखा है।

श्री गणेश दत्त गौड इन्द्र ने एकांकी रचना का प्रारंभ 'बलिदान' एकांकी से किया है। यह पारसी शैली से प्रभावित पुराने ढंग का एकांकी है। इसी शैली पर धार्मिक पौराणिक एकांकी 'मीठा जहर', 'लीला चमत्कार', 'भक्त राजनंद', 'जित देखो तित वही', 'जय बोलती हड्डी' इत्यादि विनिर्मित हैं। आधुनिक शैली पर ऐतिहासिक नैतिक आधार को लेकर 'विचित्र संयम', 'विचित्र बालक', 'लीला चमत्कार', 'प्रेम और कर्तव्य', 'कुणाल', 'कलिंगविजय', 'नारी पाप है', 'परिमार्जन', 'कला का पुरस्कार', 'विजय महोत्सव', 'स्वाधीनता की देवी' आदि रचित हैं। राजनैतिक रुप को लेकर 'राष्ट्र ध्वज गरिमा', 'जय हिन्द', 'भारत माता के मंदिर पर', 'बलिदान' आदि हैं। धार्मिक पौराणिक धारा में आपकी 'भक्त राजनंद', 'देवलोक में दीपोत्सव', 'मीठा जहर', 'जय बोलती हड्डी' हैं। आपकी एकांकियो मे 'सम्मान', 'परीक्षा', 'विक्रम विजय', 'पुरस्कार', 'त्यागी हातिम', 'उदारता' आदि आपकी बाल एकांकियाँ हैं। 'बलिदान' एवं 'प्रत्युपकार' आपकी सामाजिक एकांकियॉ हैं। इन्द्र जी के ऐतिहासिक एकांकियों में आदर्शवाद तथा राजनीतिक एकांकियों में यथार्थवादी व्यंग्य है। आप पर पारसी शैली का स्पष्ट प्रभाव लक्षित होता है। कथोपकथन लम्बे तथा विवेचनात्मक हैं, सरसता हेतु गीतों का विधान है। दृश्यों की अधिकता है। आपकी एकांकियॉ अभिनयसक्षम हैं।

डॉ. सरनामसिंह 'अरुण' ने सामाजिक, पौराणिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक एवं हास्य-व्यंग्यमय कथानकों को लेकर 'नंदिग्राम का तपस्वी', 'साधना', 'एकावली', 'परित्याग', 'स्वर्गपतन', 'तपस्विनी', 'सत्य का दण्ड' आदि एकांकी संग्रहों की रचना की। सामाजिक विषयों की ओर आपका विशेष रुख रहा है। अपनी व्यापक तथा विस्तृत अनुभूति, सूक्ष्म दृष्टि, अन्तसंघर्ष के चित्रण में आप सिद्धहस्त हैं। अरुणजी की एकांकी की विशेषता मानव के अन्तर्जगत् है। आपकी एकांकियों का प्रधान आकर्षण विकासमय संवेदना की दिशा में है।[123] एकांकियों में अभिनयतत्व का अभाव है। सुपाठ्य एकांकियों की रचनाएँ की हैं। इनमें दृश्यों की अधिकता है तथा रंगसंकेतों की न्यूनता है। अनन्तकुमार पाषाण जी की प्रारंभिक रचनाएँ हैं– 'नारायणी', 'युग का आग्रह', 'आदि का अंत' इत्यादि हैं। 'ऋतुराज' आपकी प्रौढ रचना है इसकी शैली प्रहसनात्मक है। यह गीतिनाट्य हिन्दी भाषा का प्रथम मौलिक प्रयत्न ऐसा एक आलोचक का कहना है। इसमें एक ही गीतिपूर्ण अंक है।[124] इसके अतिरिक्त 'हड़ताल और उपवास', 'पतझड़ के फूल', 'सूनी सडकें', 'गर्द के गुम्बद' आदि अन्य एकांकियाँ हैं। 'बर्फ की चट्टानें', 'किलकिलाने के कौवे' उनके प्रहसन हैं। 'सूनी सडकें' आपकी चरित्र प्रधान एकांकी है। ये सभी एकांकियाँ अभिनयक्षम हैं। नए एकाकियों में मुख्यतयः सामाजिक विषय को लेकर आपने एकांकी रचनाएँ की हैं।

प्रो. अर्जुन चौबे काश्यप ने मौलिक बुद्धिवादी दृष्टिकोण तथा नवीन विचार को लेकर मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भारतीय जनजीवन और समाज के सभी पहलुओं को जॉच परखकर उन्हें क्रांतिकारी रुप से अपने एकांकियों में प्रस्तुत किया है। आप पर फ्रायड तथा कार्ल मार्क्स का प्रभाव है। 'समाज बल' एकांकी प्रारभिक कृति है। आपकी प्रमुख एकांकियॉ हैं - 'कला', 'व्यक्तिपूजा', 'मरीचिका', 'मोहन की गवाही', 'रक्तचाप', 'पागल कुत्ता', 'कपट', 'पानी', 'रखैल', 'बडे भाई', 'भाग्य', 'सहोदर', 'समाचार', 'दुविधा', 'परीक्षा की घडियाँ', 'अंधकार', 'उन्मादी', 'नौकरी', 'झाँकी', 'धोखा', 'विजय', 'मौका', 'दिवालिया', 'नया युग', 'विवशता', 'नयी रात', 'परिणय की बेला', 'सेवा', 'भीतर और बाहर', 'नशे में विद्रोह', 'दूसरी बीवी', 'परमाणु बम', 'आरती', 'गुंडा', 'मीठे ऑसू', 'मजमा', 'समाज की चिंगारी', 'मन की जीत', 'महलों की दासी', 'पत्रों की चोरी', 'झलक', 'कटघरे में', 'तलाक', 'तार आया था', 'मास्टरजी', 'बरगद का पेड', 'डायन', 'मूर्छा', 'पहली रात', 'धरोहर', 'सराय में', 'संयोग', 'प्रेरणा', 'सम्मोहन', 'निर्देशन', 'विक्रमी संवत्', 'दोहरा व्यक्तित्व'। अपने एकांकियों में जीवन को भौतिक एवं सामाजिक अनुक्रमों की ईकाई माना है।[125] रुढिग्रस्त समाज के भीतर जागरुक व्यक्ति की समस्या को लेकर आपकी एकांकियाँ विभिन्न परिवेश तथा परिवर्तनचक्र के अन्तर्गत अनेक आर्थिक, नैतिक, मानसिक और लैंगिक समस्याओं

का चित्रण है। आपके एकांकियों के कुछ पात्र उग्र बुद्धिवादी वैज्ञानिक साहित्यिक हैं या जागरुक हैं एवं हिपोक्रिट हैं तथा कुछ लाचार भी हैं। इनके द्वारा समाज के विभिन्न वर्गो-पेशों, स्तरों के व्यक्तियों के स्वरुपों पर व्यंग्य किया है। आपका झुकाव समाजवाद की ओर है।[126] इसीलिए आप समाज के दुराव-छिपाव, बनावटपन के विरुद्ध हैं। आपके एकांकियों की समस्याएँ यौनजीवन, प्रेम व्यवहार, अतृप्त युवकों का जीवन, सभ्यता का खोखलापन, गलत आदर्शो के प्रति आकांक्षा, सामाजिक वैषम्य नई हैं।[127] छायावादी कवि होने के कारण युग धर्म एवं युग प्रणाली की छाप आपकी एकांकियों पर है। अपनी एकांकियों के माध्यम से कुंठित व्यक्तियों के लिए मनोवैज्ञाकि पूर्व पीठिका उपस्थित कर रहे हैं। 'कवि प्रिया', 'रजनीगंधा', 'प्रतिक्षा बलि' में उनकी कवित्व शक्ति विशेषतः मुखरित होती है।[128] आपकी एकांकी कवित्व की नाटकीयता के प्रतीक हैं।[129]

विनोद रस्तोगी जी मूलतः ऐतिहासिक और सामाजिक एकांकीकार है। 'पुरुष का पाप', 'पत्नी परित्याग', 'साम्राज्य और सोहाग', 'दो चॉद', 'प्यार और प्यास', 'आकाश पाताल', 'सोहागरात', 'सौन्दर्य का प्रायश्चित', 'आज मेरा विवाह है' आदि एकांकियों में आपने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आज की समस्याओं पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। लेखक ने इन एकांकियों में नारी के प्रति पुरुष के कुत्सित एवं अन्यायपूर्ण व्यवहार और शोषण की भर्त्सना की है। "ये एकांकी नारी की मनोवृत्ति को उत्कर्ष की ओर ले जाने तथा पुरुष के हृदय में उसके प्रति ममता जगाने एवं नारी के शौर्य, बलिदान और सद्गुणों की गौरव गाथा के लिए लिखे गए हैं।"[130] सामाजिक एकांकियों में रस्तोगी जी आधुनिक जीवन के बहुत पास हैं। इनमें प्रमुख हैं - 'आजादी के बाद', 'पाप और पुण्य', 'सोना और मिट्टी', 'प्यार और पैसा', 'लूप होल', 'रथ के पहिए', 'पैसा, पत्नी और बच्चा', 'मंगल मानव और मशीन', 'अंधेरा फिसलन और पांव', 'कुंवारी बहु', 'खोपडी और बम', 'डाक्टर इसे बचा लो' आदि। 'आजादी के बाद' में भारत के पतनोन्मुख समाज का चित्रण है। इसका उद्देश्य पूँजीवादी शासन के स्थान पर श्रमिकों की साम्यवादी सरकार की स्थापना है। इसमें शरणार्थी समस्या, व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार, भ्रष्ट नेतागिरि, काला बाजार, भ्रष्टाचार, समस्यामूलक एवं आदर्शोन्मुख यथार्थवादी रचना है जिसमे समस्या का हल भी दिया गया है। गृहस्थी रुपी रथ सुख शांति पर राजपथ पर सरलता से तभी चल सकता है जब पति-पत्नी रुपी दोनो पहिए साथ आगे बढ़े। "पैसा, जनसेवा और लडकी अनाथालयों, विधवाश्रमों तथा विवाह कराने का ठेका लेने वाली तथाकथित संस्थाओं की ओट में पनपने वाले व्यभिचार तथा अनाचार को लेकर लिखा गया है। 'मंगल मानव और मशीन' काल्पनिक विज्ञान पर आधारित हिन्दी में एक मौलिक प्रयोग है। इसका उद्देश्य शांति का प्रचार है। 'और मुन्ना मर गया' आपकी मनोवैज्ञानिक एकांकी है।

कुछ नए ऐतिहासिक एकांकी उल्लेखनीय हैं। जैसे 'मावली विजय', 'काला दाग', 'कसम कुरान की' आदि हैं। रस्तोगी जी के एकांकियों में कथानकों की नवीनता और रोचकता है। 'आजादी के बाद' में एक लम्बा दृश्य रखने का मौलिक प्रयोग है। एक ही स्थान पर एक ही समय मे घटने वाली कोई नाटकीय घटना ही आपके एकांकियों का विषय बनी है। संवादों की सहायता से पूर्व परिचय, प्रायः पहला संवाद कथावस्तु के मूल विचार से सम्बन्धित कथासूत्र को आगे बढ़ाने वाला है। आगे भी आपका प्रत्येक संवाद, प्रत्येक वाक्य, प्रत्येक शब्द सार्थक होकर प्रभाव उत्पन्न करता है।

श्री आरसी प्रसाद सिंह के एकांकी मुख्यतः सामाजिक समस्या प्रधान है। आपने अपनी एकांकियों में अनेक छोटी-मोटी सामाजिक समस्याओं को उठाकर उनका हल प्रस्तुत किया है। जैसे परित्यकताओं की समस्या, साम्यवाद, समाजवाद, प्रेम और कला, गरीबी तथा उदरपूर्ति की विषमताएँ, पूँजीवाद का शोषण, दलितों की दुरावस्था, जर्जर सामंतशाही के चित्र आदि। आपका दृष्टिकोण प्रगतिवादी है। आप युग की सामाजिक और राजनीतिक विचारधारा को मुखरित करते हैं। आपकी वाणी में जराजीर्ण सामन्ती समाज के प्रति घृणा और विद्रोह के भाव हैं। तटस्थ भाव से आप समाज की विषमताओं की आलोचना करते हैं तथा निष्कर्ष पाठकों पर छोड देते हैं। आपकी सर्वप्रथम एकांकी है 'जब दुनिया अबोध थी' इसमें मानव जीवन की दो अनादि समस्याओं, भूख और काम का विश्लषण सर्वथा नूतन नाटकीय प्रणाली में प्रस्तुत किया गया है। यह रचना आज भी हिन्दी के एकांकियों में दिशानिर्देश तथा विचार स्वातंत्र्य का महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित कर रही है। आपकी सामाजिक एकांकियों मे है - 'टूटे हुए दिल', 'कलंक मोचन', 'जब दुनिया अबोध थी', 'धूप छांह' (गीतिनाट्य) आदि हैं।

चतुरसेन शास्त्री के एकांकियों में ऐतिहासिक, पौराणिक विषय प्रधान रचनाएँ अधिक हैं। 'लोहे का भय', 'दुर्गाधिकारिणी', 'विधवासिंहनी', 'छत्री पुत्री', 'वीर वधू', 'स्वयंवरा बाला', 'हाड़ा रानी', 'पन्ना धाय' तथा 'राखी' आदि एकांकियों में लेखक ने भारतीय इतिहास के गौरवपूर्ण सूत्रों को चित्रित किया है। इनमें प्राचीन भारतीय चरित्र गोरव एवं राष्ट्रीयता की भावनाएँ चित्रित हुई है। 'राधा कृष्ण', 'हरिशचन्द्र शैय्या', 'श्री भरत' तथा 'सीता-राम' जैसे एकांकियों में लेखक ने पौराणिक कथानक प्रस्तुत किये हैं। इनमें सत्य, नीति, ज्ञान आदर्श आदि उदात्तपरक भावनाओं का चित्रण मिलता है। ये सभी एकांकी मुख्यतः कथावस्तु प्रधान हैं जिनमें चरित्र-चित्रण और सवाद-योजना को भी महत्व दिया गया है।

आधुनिक हिन्दी एकांकी के क्षेत्र में डॉ. प्रभाकर माचवे की रचनाएँ विविध प्रवृत्तियों की प्रसारक हैं। उनके एकांकियों का मुख्य विषय सामाजिक रुढियाँ, ऐतिहासिक विषय वस्तु, मनोवैज्ञानिक यथार्थ आदि हैं। रेडियो तथा रंगमंच के साथ-साथ विशुद्ध साहित्यिक एकांकियों की रचना भी उन्होंने की है। मौलिक एकांकियो की रचना के साथ-साथ देशी तथा विदेशी भाषाओं के रेडियो रुपान्तर भी उन्होने किये है। बच्चों के लिए भी कुछ पद्यात्मक एकाकियों की रचना उन्होंने की है। आपकी प्रमुख एकांकियो मे 'सत्यांत', 'अदालत के पास होटल', 'श्रम पूजा', 'व्यवहार पूजा', 'अपनी अपनी ढपली', 'गली के मोड पर', 'गुड बाई मि. शर्मा', 'पागलखाने मे', 'धनवान बनो', 'पंच कन्या', 'पृथ्वीराज संयोगिता', 'पर्वत श्री', 'संकट पर संकट', 'गांधी की राह पर', 'घरेलु झगडे', 'राम भरोसे', 'पुराने चावल', 'अधकचरे', 'अप्रैल फूल', 'गलत नम्बर' आदि है। आधुनिक समाज में व्याप्त अंध प्रदर्शन की भावना का चित्रण इनके एकांकियों में मिलता है। आधुनिक भारतीय समाज एक ओर प्रगति की ओर उन्मुख है और दूसरी ओर वह सामाजिक रुढियों से ग्रस्त है। इसलिए मनोवैज्ञानिक विकृतियों और कुण्ठाओं ने उसे त्रस्त कर रखा है। सामाजिक जीवन की इन्हीं विडम्बनात्मक परिस्थितियों का मनोवैज्ञानिक आधार पर यथार्थपरक विश्लेषण इनके एकांकियों में मिलता है।

वर्तमान युग के अन्तर्गत एक एकांकीकार के रुप में भारतभूषण अग्रवाल का नाम भी उल्लिखित किया जाता है। इनकी एकांकी रचनाओं में 'पलायन', 'बेटी की विदा', 'अभिमान', 'भाग्यतारा', 'युग-युग या पाँच मिनट', 'जीवन की ओर', 'परछाई', 'लज्जा', 'बीमार', 'महाभारत की सांझ', 'रत्नावली', 'गंगा की गाथा' आदि हैं। इनके विषय सामाजिक पौराणिक हैं। इनके एकांकी रेडियो पर भी सफलतापूर्वक अभिनीत किये जा चुके हैं। एकांकी के कलात्मक तत्वों के निर्वाह के साथ-साथ सामाजिक यथार्थ का निरुपण इन रचनाओं की विशेषता है। श्री मधुकर खेर के एकांकियों में सामाजिक पारिवारिक एवं राजनैतिक क्षेत्रीय समस्याओ का चित्रण किया गया है। समाज में आधुनिकता के प्रति बढती हुई अनावश्यक मोह की भावना के प्रति व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण इनकी रचनाओं में उपलब्ध होता है। 'नव निर्माण', 'अन्नदेवता', 'समाज देवता', 'मंदिर प्रवेश', 'यह पाकिस्तान है', 'फिल्मी कहानी', 'नारी की पसन्द', 'समस्या का हल', 'अंतिम विजय सम्मेलन' आदि एकांकियों मे समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और रुढियों के प्रति व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण भी मिलता है।

श्री अनिल कुमार की एकांकी रचनाएँ मुख्यतः सामाजिक एवं ऐतिहासिक विषयों पर ही आधारित हैं। रेडियो रुपान्तरों के साथ-साथ इन्होंने कुछ गीति-नाट्यों की भी रचना की है। प्रजापति की 'निर्माण

शाला', 'फागुन के दिन', 'ग्रहों का निर्णय', 'मजबूर', 'घूंघट', 'जय भारत जननी', 'महामाया', 'फाग' आदि। इसमें इनकी प्रतिनिधि रचनाएँ कही जा सकती हैं। आधुनिक समाज के विडम्बनात्मक स्वरुप का परिचय इनके एकांकियों में मिलता है। चरित्र-चित्रण एवं अन्तर्द्वन्द्व की दृष्टि से इनके पात्र सशक्त होकर उभरे है। ऐतिहासिक एकांकियों में कल्पनात्मक तत्वों के साथ ऐतिहासिक तथ्यों का सम्मिश्रण है। सामाजिक कथावस्तु पर आधारित रचनाएँ मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रधान हैं। श्री चिरंजीत की एकांकी रचनाओ मे 'साथ वाला मकान', 'नाटक का अंत', 'गूजती याद', 'शक्की बीबी', 'नाटक का निर्माण', 'मेहमान', 'मेहमान', 'विवाह की धूम', 'अखबारी विज्ञापन', 'पावस की एक शाम', 'अपहरण', 'होली के दिन' आदि हैं। इनमें गीति-नाट्य, संगीत-रुपक एवं प्रहसन भी सम्मिलित हैं। सामाजिक कथावस्तु पर आधारित एकांकियों में पारिवारिक परिस्थितियों और समकालीन समस्याओं के संदर्भ में यथार्थपरक चित्रण मिलता है। मध्यवर्गीय समाज की मान्यताओं का भी विद्रुपयुक्त चित्रण इनकी रचनाओं की विशेषता है। गोविन्द लाल माथुर ने राजस्थानी भाषा में सुधारवादी दृष्टिकोण को लेकर राजस्थान के मध्य एवं निम्न वर्गो के अनेक सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक समस्याओं को लेकर प्रमुखतः 'लालची माँ-बाप', 'ठाकुरशाही की एक झलक', 'सूदखोर', 'शिक्षा का सवाल', 'हरिजन', 'बाल विधवा', 'परदा', 'फिल्मी हवा', 'बेकारी', 'काला बाजार', 'कर्जे का अभिशाप', 'मुकद्मे बाजी', 'अनुशासन हीनता', 'युनियन का रोग' आदि एकांकीयो की रचनाएँ की हैं। इन एकांकियों के विषय चयन मे पर्याप्त विभिन्नता और वास्तविकता है।

उपर्युक्त एकांकीकारों के अतिरिक्त अनेक नवोदित एवं उदीयमान नाट्यकार एकांकी के क्षेत्र में उत्साह से कार्य कर रहे है। प्रायः सभी विषयों को लेकर एकांकियों की रचनाएँ हो रही हैं किन्तु मुख्य रुप से इनकी प्रवृत्ति सामाजिक और राजनीतिक विषयों की ओर है। कुछ एकांकीकारों ने स्वतंत्रता के पश्चात् नई मान्यताओ के अनुरुप नवनिर्माण सम्बंधी एकांकियों की रचनाएँ की तथा एकांकियों के विकास में अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया। प्रमुख एकांकीकारों में हैं शंभूदयाल सक्सेना, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, गिरीजादत्त शुक्ल 'गिरीश', कुँवरचन्द्र प्रकाश सिंह, सूर्यदेव नाराण श्रीवास्तव, श्रीराम वाजपेयी, मुरारी लाल शर्मा, कुंज बिहारी लाल सोही, श्रीकृष्ण लाल वर्मा, पुन्नालाल बक्शी, रामदीन पांडे, बिट्ठलदास कोठारी, जनार्दन मुक्तिदूत, अनन्तकुमार पाषाण, रेवतीसरन शर्मा, अमृतराय, प्रेमराज शर्मा, जानकीशरण वर्मा, विश्वम्भर मानव, भृंगतुपकरी, विराज, लक्ष्मणसिंह, प्रफुल्लचन्द्र ओझा, कर्तारसिंह दुग्गल, केदारनाथ मिश्र, सिद्धनाथ कुमार, देवराज दिनेश, ललित सहगल, प्रभा पारिख, विमला रैना, राजेन्द्र सक्सेना, कृणचन्द्र मुद्गल, आदि-आदि एकांकीकारों के नाम विविध प्रवृत्तियों के क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं।

पूर्व विवेचित प्रसाद युग के परवर्ती काल में आधुनिक हिन्दी एकांकी का विकास अनेक परम्परागत तथा नवीन प्रवृत्तियों का आधार लेकर चला है। समकालीन सामाजिक परिस्थितियों में हुए शीघ्र परिवर्तन ने भारतीय जन-जीवन को जितने व्यापक रुप मे प्रभावित किया उसका प्रतिबिम्ब इस युग के एकांकी साहित्य में उपलब्ध होता है। सामाजिक सुधार की जो भावना हिन्दी एकांकी में भारतेन्दु युग से प्रारंभ हुई थी वह नवीन सामाजिक समस्याओं के आधार पर प्रसादोत्तर युग के एकांकियों में भी समाविष्ट हुई। समकालीन बौद्धिक, दार्शनिक एवं सामाजिक विचारकों के सिद्धान्तों का व्यावहारिक प्रतिफलन इस युग के एकांकीकारों मे हुआ।

इस युग के प्रमुख एकांकीकारों में हैं - रामवृक्ष बेनीपूरी, शंभुदयाल सक्सेना, लक्ष्मीनारायण लाल, डॉ. सरनामसिंह 'अरुण', प्रो. अर्जुन चौबे काश्यप, विनोद रस्तोगी, जयनाथ नलिन, विष्णु प्रभाकर, धर्मवीर भारती, विमला लूथरा, सत्येन्द्र शरत्, रावी, प्रो प्रकाशचन्द्र गुप्त, प्रभाकर माचवे, चिरंजीत, गोपाल शर्मा, रेवतीसरन शर्मा, रामसरन शर्मा आदि। 'लक्ष्मण परित्याग', 'स्वर्ग में गांधी', 'पराजय के बाद', 'वर निर्वाचन', 'प्रेरणा', 'आवाज का नीलाम', 'प्रतिशोध', 'अग्नि परीक्षा', 'वधू चाहिए', 'इंसान', 'बीमार', 'दबी आग', 'क्रांति' आदि इस युग की प्रसिद्ध एकांकी रचनाएँ हैं। एकांकीकारों ने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, पौराणिक आदि कथासूत्रों को आधार बनाकर मुख्यतः एकांकी लिखे। कथानक के क्षेत्र में उन्होंने सूक्ष्मता को महत्ता दी। मानव-मन के गूढतम रहस्यों, व्याप्त चेतनता तथा वर्ग-संघर्ष को विषय रुप में प्रमुखता मिली। सांस्कृतिक गौरव के चित्रण के साथ-साथ भारतीय समाज में क्रमशः जाग्रत होनेवाली राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति भी इनकी एकांकियों में निहित है। महात्मा गांधी के जीवन-दर्शन से प्रभावित होने के कारण अनेक लेखकों ने अपनी एकांकियों में मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रश्रय दिया है। आधुनिक भारतीय साहित्य पर पडनेवाले मनोविश्लेषणवादी प्रभाव के फलस्वरुप अनेक एकांकीकारों ने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश अपनी एकांकियों में किया है। सामाजिक यथार्थ का चित्रण मुख्यतः किया है। एकांकीकारों ने आधुनिक समाज के विभिन्न वर्गो के प्रतिनिधि पात्रों को अपनी रचनाओं मे चित्रित किया है जो समाज में प्रचलित विभिन्न विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करती है। वैयक्तिक, पारिवारिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक विषयों के अनुरुप इन एकाकीकारों ने आदर्शपरक एवं यथार्थपरक रचनाएँ प्रस्तुत की है। जीवन के परिवर्तनशील मूल्यों और संघर्षमय परिस्थितियों के बीच अदम्य आस्था की भावना इस युग के एकांकीकारों की विशेषता है।

सामाजिक विकृतियों को इस युग के एकांकीकारों ने यथार्थपरक आधार पर प्रस्तुत किया है और

उनके निर्मूलन के लिए व्यावहारिक उपाय सुझाए हैं। मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में विकसित सिद्धान्तों का आधार ग्रहण करके इन लेखकों ने मानसिक कुण्ठाओं एवं भावना ग्रंथियो का तार्किक विश्लेषण करते हुये सामाजिक अभिशाप के मूल कारणों की विवृत्ति की है। फलतः यथार्थता की व्यापक स्वीकृति आज के एकांकी की एक विशेषता कही जा सकती है। समाजवादी यथार्थ और मनोवैज्ञानिक यथार्थ आज एक में सश्लिष्ट होते जा रहे है। आधुनिक समाज में एक भयानक रोग की भाँति जो अंध-प्रदर्शन की मिथ्या भावना निहित है उसकी ओर भी एकांकियों में संकेत है।

रेडियो पर एकांकी की लोकप्रियता के कारण रेडियो रुपक इतने अधिक प्रचलित हुए कि इससे रेडियो रुपकों की शिल्प योजना निरन्तर परिमार्जित होती गई। रेडियो एकांकी की लोकप्रियता के कारण ध्वनि-रुपको अथवा ध्वन्यात्मक एकांकियों का विकास विशेष रुप से हुआ। टेलिविजन इत्यादि के प्रचार के कारण एकांकी ने नवीन रुप ग्रहण किया। इसके साथ ही रंगमंच की समकालीन आवश्यकताओं ने भी एकांकी के स्वरुप के विकास में पूर्ण योग दिया। वैज्ञानिक युग में मनुष्य तथा समाज की वैज्ञानिक दृष्टि, साहित्य में परिमार्जित भाषा आदि के विकास से हिन्दी साहित्य में एकांकी का विकास निरन्तर परिष्कृत होता गया। नए पीढी के एकांकीकार प्रायः सभी पूर्व-पश्चिम देशों के एकांकी-साहित्य के सीधे सम्पर्क में आये हैं। इससे उन्हें एकाकी नाट्य-शिल्प की संभावना और क्षेत्र की उपलब्धि और विकास को एक नया आयाम मिल गया। भावनात्मकता और कल्पनात्मकता के साथ-साथ व्यावहारिकता और यथार्थ की स्पष्ट स्वीकृति इन रचनाकारों की विशेषता है। ऐतिहासिक विषयों पर आधारित एकांकी मुख्यतः उन गौरव-गाथाओं को प्रस्तुत करती हैं जो आधुनिक संदर्भ में पाठकों के लिए प्रेरणादायी सिद्ध हो सकते हैं।

पूर्ववर्ती पृष्ठों में हिन्दी एकांकी के आरंभ और विकास के सम्बन्ध में जो परिचयात्मक वर्णन प्रस्तुत है उसके आधार पर निष्कर्ष रुप में निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होते है।

1) हिन्दी एकांकी के प्रारंभ के सम्बन्ध में विद्वानों के विभिन्न मतों का विस्तृत निरुपण के आधार पर तत् सम्बन्ध में मुख्य रुप से दो प्रकार के मत अद्यावधि प्रचलित हैं। प्रथम मत के अनुसार हिन्दी एकांकी का प्रारंभ भारत के प्राचीनतम साहित्य से होता है। इस मत के माननेवालों में भी कतिपय मतभेद हैं। डॉ रामचरण महेन्द्र और कीथ जैसे विद्वान वेद की ऋचाओं में हिन्दी एकांकी के प्रारुप को देखते है। डॉ. ओझा, डॉ. ललितप्रसाद शुक्ल आदि ने सस्कृत नाट्य-शास्त्र के आरंभ और विकास के अन्तर्गत हिन्दी एकांकी के प्रारंभिक स्वरुप को देखा है।

2) द्वितीय प्रकार के मत के अनुसार हिन्दी एकांकी का प्रारंभ आधुनिक युग की देन माना गया है। इस

मत को माननेवालों की संख्या तुलना में अधिक है। इनमें डॉ. एस.पी. खत्री, प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल आदि के नाम प्रमुख हैं। इन्होंने हिन्दी एकांकी की प्रमुख विशेषताओ के निरुपित करते हुए यह सिद्ध किया है कि हिन्दी एकांकी सस्कृत एकांकी से सर्वथा पृथक् है और दोनों की पृथक् स्वतंत्र धाराएँ हैं। 19वीं शताब्दी की समकालीन परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में आधुनिक हिन्दी एकांकियों की विशेषताओं को लक्ष्य करते हुए प्रो. सत्येन्द्र, डॉ. ललितप्रसाद शुक्ल, डॉ. ओम प्रकाश सक्सेना, डॉ. सूर्यकान्त आदि विद्वानों ने यह सिद्ध किया है कि हिन्दी साहित्य में नाटकों का प्रारंभ भारतेन्दु तथा उनकी मण्डली से हुआ है। अतः भारतेन्दु काल हिन्दी एकांकियों की प्रथमावस्था है या उसे हिन्दी एकांकी के विकास का प्रथम सोपान कहा जा सकता है।

इस प्रकार हिन्दी एकांकी के प्रारंभ के संबंध में विद्वानों के मतभेद तथा उनके द्वारा प्रस्तुत तत्संबंधी तर्कों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि एकांकी के बीज भारतीय साहित्य में रहे होंगे। संस्कृत नाट्यशास्त्र के निर्माण से पूर्व नाट्यविद्या अपने पूर्ण उत्थान अवस्था में थी अतः नाटक के भेद-उपभेद जो नाट्यशास्त्र में वर्णित हैं वे अवश्य ही तत्कालीन साहित्य मे उपस्थित रहे होंगे। लेकिन हिन्दी एकांकी का जो स्वरुप आज सर्वमान्य रुप से प्रतिष्ठित है वह निश्चित ही अपनी लाक्षणिकताओं के कारण पूर्ववर्ती संस्कृत एकांकी से भिन्न है। अतः विद्वानों के इस मत को स्वीकार करना ही उचित प्रतीत होता है कि हिन्दी एकांकी आधुनिक युग की देन है।

3) हिन्दी एकांकी के प्रारंभिक विकास में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्यिक योगदान का अत्यंत महत्व है। उनके प्रखर व्यक्तित्व ने संस्कृत की मृतःप्राय नाट्य परंपरा में नए प्राण फूँककर हिन्दी नाटक को एक नए स्वरुप के साथ सजीवन किया। भारतेन्दुजी का युग राजनैतिक संघर्ष, सामाजिक एवं धार्मिक सुधार, सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय जागरण और नवोन्मेष चितनधारा के प्रादुर्भाव का युग था। भारतेन्दुजी ने अपने राष्ट्रीय प्रेम को साहित्यिक माध्यम से साकार किया जिसमें अनुवादित और मौलिक नाट्य-सृजन का कार्य प्रमुख था। उन्होने अपने सुधारवादी दृष्टिकोण के अनुरुप ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथाओं का चयन करके उनका सर्वथा मौलिक नाट्यकरण किया। उनकी रचनाएँ, रचनाशैली में संस्कृत नाट्यशास्त्र के सिद्धान्तों से प्रभावित होते हुए भी पाश्चात्य नाट्य-कला के अनुरूप नूतन प्रयोग के सशक्त प्रमाण हैं। अंक विभाजन, दृश्य-विधान, श्रव्यवस्तु का लोप, भरतवाक्य का अपेक्षाकृत कम प्रयोग, व्यंग्यात्मक भाषा, स्थान और समय की इकाईयों का निर्वाह, मनोविश्लेषणात्मक शैली, कथावस्तु की गतिशीलता आदि पाश्चात्य नाट्य-कला के

प्रभाव का परिणाम है। इस प्रकार हरिश्चन्द्रजी का नाट्य-सृजन प्राचीन एवं नूतन शैली विधान का समन्वित रुप है। उनकी रचनाओं में 'प्रेम-योगिनी', 'नील देवी', 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'विषस्य विषमौषधम्' आदि मौलिक रचनाएँ अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण हैं।

आधुनिक एकांकी के प्रायः सभी अंग बीज रुप में प्रस्तुत होने के कारण भारतेन्दुजी की एकांकियों को आधुनिक एकांकी का प्राथमिक रुप कहा जा सकता है। इनकी एकांकियों में सोद्देश्यता तथा युग की आवश्यकता एवं जन-रुचि का पूरा ध्यान रखा गया है। भारतेन्दुजी के साहित्यिक योगदान का ऐतिहासिक महत्व है। उन्होंने जीर्ण-शीर्ण धार्मिक मान्यताओं, सामाजिक त्रुटियो तथा देश की वर्तमान अभावग्रस्त, पतितावस्था आदि का चित्रण करते हुए लोगों में राष्ट्रीय चेतना जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

भारतेन्दुजी के प्रखर व्यक्तित्व एवं सुधारवादी विचारों का अत्यधिक प्रभाव समकालीन अनेक साहित्यकारों पर भी पडा है। एक प्रकार से उन्होंने अनेक नाट्यकृतियों के सृजन का भी कार्य किया है। भारतेन्दु युग के प्रसिद्ध एकांकीकारों मे बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, बदरीनारायण चौधरी, अंबिकादत्त व्यास, देवकीनंदन त्रिपाठी, आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। इस युग की अधिकांश एकांकियाँ ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथावस्तु को लिए हुए हैं। इनमें समकालीन आदर्शवादी तथा यथार्थवादी विचारधाराओं का समन्वय पाया जाता है। इस युग की एकांकियों में राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सुधारवादी विचारधारा, गद्य-पद्यमय शैली, अल्पसंख्यक पात्र संयोजन, रंग सूचनाएँ आदि की विशेषताएँ पायी जाती हैं। इस युग की प्रमुख रचनाओं में हैं - 'संयोगिता स्वयवर', 'जैसा काम वैसा परिणाम', 'बुढे मूँह मुँहासे', 'गुन्नौर की रानी', 'बाल-विवाह', 'कलियुग और घी', 'चौपट-चपेट' आदि।

4) हिन्दी एकांकी के विकास का द्वितीय उत्थान द्विवेदी युग के अन्तर्गत देखा जा सकता है। इतिहास की दृष्टि से यह युग महान् क्रांतियों का युग था। राजनैतिक परिस्थितियों में एक ऐसा मोड आया था जिसके परिणामस्वरुप राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित नवीन आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। साहित्य के क्षेत्र में पं महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रखर व्यक्तित्व ने भाषा और साहित्य के क्षेत्रों में नवीन आन्दोलन का नेतृत्व किया। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से साहित्य की प्रमुख भाषा के रुप में हिन्दी खडी बोली को प्रतिष्ठित करने का जहाँ एक गुरु कार्य किया वहाँ साहित्य के क्षेत्र में विभिन्न विधाओं के विकास का मार्ग दर्शन का महद् कार्य भी किया। द्विवेदी जी के मार्गदर्शन में अन्य विधाओं के

साथ-साथ हिन्दी एकांकी के स्वरुप ने भी पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव ग्रहण किया। उस युग की मूल चेतना एकांकी के सृजन में भी इस चेतना के विविध रुप दृष्टिगत होते हैं। द्विवेदीजी के अतिरिक्त इस युग के प्रमुख एकांकीकारों में - राधेश्याम कथावाचक, तुलसीदास शैदा, बदरीनाथ भट्ट, श्री मंगलाप्रसाद विश्वकर्मा, जी.पी श्रीवास्तव, कामताप्रसाद गुरु, ब्रजलाल शास्त्री आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। ब्रिजलाल शास्त्री ने मुख्य रुप में ऐतिहासिक कथावस्तु पर आधारित एकांकियों का सृजन किया जिसके द्वारा समाज में नारी के उज्जवल चरित्र की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। एक प्रकार से यह भारत की वीरागनाओं का गौरवगान कहा जा सकता है। राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित इस युग में अनेक सामाजिक सुधार के कार्य भी गतिशील थे। भारतेन्दु युग की भाँति आलोच्ययुग के एकांकीकारों ने भी सामाजिक सुधार से प्रेरित अनेक एकांकियों का सृजन किया। 'विवाह विज्ञापन', 'चुंगी की उम्मीदवारी', 'मिट्टी का शेर', 'ऑखो में धूल' आदि अनेक सुधारवादी सामाजिक एकांकियॉ रचित हुई। व्यंग्य और हास्य प्रधान कई उत्तम प्रहसन भी इस युग में लिखे गए। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने भारतीय संस्कृति के आदर्शवादी राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत ऐतिहासिक एवं सामाजिक एकांकियों का निर्माण किया। 'मंगल मंदिर', 'एकलव्य', 'कर्तव्यपालन' आदि प्रमुख एकांकियॉ हैं।

द्विवेदी युग की एकांकियाँ समकालीन राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक सुधारवादी आन्दोलन को अधिक व्यापक एवं प्रभावात्मक बनाने में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। ये एकांकियाँ भारतीय समाज की जर्जर रुढियों, विकृतियों, राजनैतिक क्रांतियॉ, नवोन्मेष परिस्थितियो से उत्पन्न समस्याओं के निराकरण मे यथार्थवादी एवं सुधारवादी दृष्टि को बडे सजीव ढंग से प्रस्तुत करती हैं। द्विवेदी युगीन एकांकीकारों ने समसामयिक परिस्थितियों के अनुरुप यथातथ्य चित्रण करते हुए राष्ट्रीय चेतना के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस युग की एकांकियाँ त्याग, बलिदान और लोक कल्याण की उच्चतम् भावना से परिपूर्ण हैं।

द्विवेदी युगीन एकांकियों का स्वरुपगत विकास भी एकांकी के विकास का महत्वपूर्ण मोड है। संस्कृत की नान्दी प्रस्तावना, भरत वाक्य आदि नाट्य-रुढियाँ लगभग समाप्त हुई और पाश्चात्य नाटकों की शैली का प्रभाव बढता हुआ दिखाई देता है। गद्य-पद्यमय भाषा प्रयोग की दृष्टि से अपनी निजी महत्ता रखती है। उर्दू-अंग्रेजी के सम्मिश्रण से हिन्दी खडी बोली के विकास में इस युग की एकांकी का भी महत्वपूर्ण योगदान है। हिन्दी एकांकी के विकास में इस युग की मौलिक एकांकियों

के अतिरिक्त अनूदित एकांकियाँ भी महत्वपूर्ण रही है। बंगला, अंग्रेजी साहित्य से इस युग के एकांकीकारों ने प्राचीन रुढियों के आधार पर नूतन शैली के प्रयोग प्रस्तुत किये। इस प्रकार पं. महावीर प्रसाद द्विवेदीजी के नेतृत्व में इस युग के एकांकीकारों ने अपने साहित्य सृजन द्वारा हिन्दी एकांकी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

5(i) हिन्दी के विकास का तृतीय सोपान प्रसाद युग का कहा जा सकता है। हिन्दी नाटक के आरंभ और विकास में प्रसादजी के महत्वपूर्ण योगदान को देखते हुए इस युग को प्रसाद युग कहना सर्वथा समीचीन है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह युग स्वातंत्र्य आन्दोलन की पराकाष्ठा का युग है। राजनैतिक स्वातन्त्र्य-प्राप्ति के उद्देश्य के साथ-साथ राष्ट्रीय गौरव के उत्थान के रुप में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक सुधार के क्रांतिकारी यत्न भी इसी युग की देन है। प्रसादजी के नाटकों में युग-जीवन का यथार्थ निरुपण हुआ है। युगीन जीवन की संघर्ष-पूर्ण समस्याओं के निरुपण, निराकरण, सांस्कृतिक मूल्यों के प्रतिपादन, राष्ट्रीय गौरव-गान, सामाजिक सुधार, मनोवैज्ञानिक दबाव आदि का यथार्थ एवं प्रभावशील अंकन प्रसाद के नाटकों की महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रसादजी ऐतिहासिक नाटक परंपरा को नूतन प्रयोग के साथ सफल रुप में प्रस्तुत करते हैं। उनके चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, आदि नाटक हिन्दी नाट्य-साहित्य के मील के पथ्थर हैं। नाट्य-शैली के विकास में प्रसाद जी का योगदान ऐतिहासिक महत्व रखता है। पौर्वात्य नाट्य-शैली के साथ पाश्चात्य नाट्य-शैली का सफल समन्वय उनकी अभूतपूर्व देन है। बाह्य-संघर्ष के साथ चारित्रिक अंतर्द्वन्द्वों का सफलतम निरुपण, पात्रों के चारित्रिक विकास, राष्ट्रीय गौरव, सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतिपादन, प्रतीकात्मकता, मनोविश्लेषणात्मक जीवन-दर्शन आदि नाट्य-शैली के महत्वपूर्ण अंग है। इस प्रकार प्रसाद के नाटक कथ्य, शिल्प और नाट्यविधान में पर्याप्त नवीनता है। नाट्य साहित्य के विकास के साथ प्रसादजी ने एकांकी के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आधुनिक एकांकी के स्वरुप का सर्वप्रथम परिचय प्रसादजी की एकांकी में मिलता है। अतः कतिपय इतिहासकारों ने प्रसाद की 'एक घूँट' को हिन्दी की प्रथम एकांकी माना है। एकाकी के वर्तमान स्वरुप का निर्वाह सर्वप्रथम यहाँ दृष्टिगत होता है। प्रसाद युगीन साहित्य की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि इस युग का साहित्य मानव-जीवन के अधिक निकट और यथार्थरुप में प्रतिबिम्बित हुआ है। आदर्शोन्मुख यथार्थ का उत्कृष्ट उदाहरण इस युग का साहित्य है। 'एक धूँट' में स्वच्छद प्रेम की समस्या को लेकर भारतीय एवं पाश्चात्य सांस्कृतिक संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। प्रसादजी की अन्य एकांकियों में 'सज्जन', 'प्रायश्चित', 'करुणालय' आदि हैं।

(ii) जयशंकर प्रसाद के पश्चात् हिन्दी एकांकी का नवीन रुप विकसित हुआ। सन् 1930 के बाद 'हंस', 'विश्वामित्र', 'सुधा', 'सरस्वती', 'वीणा' आदि पत्र-पत्रिकाओं में एकांकी शब्द का प्रचलन हो गया था। इस युग के प्रतिभासम्पन्न एवं प्रयोगशील एकाकीकारो में श्री सुदर्शन, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. भूवनेश्वर प्रसाद, डॉ. उपेन्द्रनाथ 'अश्क', जगदीशचन्द्र माथुर, उदयशंकर भट्ट, हरिकृष्ण प्रेमी, सेठ गोविन्ददास, लक्ष्मीनारायण मिश्र, भगवतीचरण वर्मा, गिरिजाकुमार माथुर, गणेश प्रसाद द्विवेदी आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। इस युग के एकांकीकारो ने समकालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरुप विषयवस्तु का चयन करते हुए एकांकी साहित्य का व्यापक निर्माण किया। डॉ. रामकुमार वर्मा ने पाश्चात्य एकांकियों के प्रभाव को ग्रहण करते हुए शैलीगत अनेक नूतन प्रयोग भी उस युग के एकांकी सर्जन में किए। इस युग की एकांकियाँ वैविध्यपूर्ण हैं। ऐतिहासिक कथावस्तु द्वारा जहाँ राजनैतिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को सजीवता, गहनता, प्रभावात्मकता प्रदान की गई है। वहाँ पौराणिक एवं सामाजिक कथावस्तु पर आधारित एकांकियों के द्वारा आम जनता के यथार्थ जीवन के साथ गहरा संबंध जोडते हुए तत् सम्बंधी समस्याओं के निराकरण भी ढूंढने का यत्न है। डॉ. रामकुमार वर्माजी का एकांकी 'बादल की मृत्यु' को कुछ विद्वान हिन्दी का प्रथम आधुनिक एकांकी होने का गौरव प्रदान करते हैं। 'पृथ्वीराज की ऑखें', 'राजपूत की हार', 'आजादी की नींद', 'सिकन्दर', 'इतिहास की केंचूल', 'चंगेजखाँ', 'बापू', 'कौमुदी महोत्सव', 'औरंगजेब की आखिरी रात' आदि इस युग की प्रसिद्ध ऐतिहासिक मूल्यों से सम्बन्धित रचनाएँ हैं। 'चपक', 'ताँबे के कीडे', 'लॉटरी', 'रीढ की हड्डी', 'घोसले', 'एक ही कब्र में', 'सूखी डाली', 'ईद और होली' आदि प्रसिद्ध सामाजिक एकांकी हैं।

भूवनेश्वर प्रसाद जी ने पाश्चात्य एकांकी शैली का प्रभाव ग्रहण करते हुए कतिपय महत्वपूर्ण एकांकियॉ प्रदान की। 'कारवाँ', 'शैतान', 'मृत्यु', 'रोशनी और आग', 'फोटोग्राफर के सामने' आदि। इन एकांकियों में इब्सन, बर्नाड शॉ और लारेन्स के प्रभाव और शैली को प्रस्तुत करते हुए प्रतीत होते हैं। इनमें पाश्चात्य खुलापन और अतियथार्थवादिता, व्यंग्य उग्रता कथोपकथन की मर्मस्पर्शिता, तीखी व्यंग्य वक्रोक्ति का चमत्कार आदि के प्रयोग भी हुए हैं। उदयशंकर भट्ट की एकांकियों मे पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा प्रागैतिहासिक काल के घटना प्रसंगों को लेकर अपनी सहज भावुकता के साथ ऐसे प्रतीक संकेतों के माध्यम से ऐसे भावनाट्यों की योजना की जो उनकी अपनी एक विशिष्ट एकांकी कला बन गई।

(iii) ऑल इंडिया रेडियो की स्थापना से हिन्दी एकांकी में सक्रियता आयी। चतुरसेन शास्त्री का

'राधाकृष्ण' (1937 प्रसारण वर्ष) और उपेन्द्र नाथ 'अश्क' का 'लक्ष्मी का स्वागत' (प्रसारण 23 जुलाई 1938) संभवतः पहले एकांकी थे जो रेडियो से प्रसारित हुए थे और एकांकी की लोकप्रियता में सहायक हुए थे। पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरुप एकांकी की लोकप्रियता बढी और स्वतन्त्र विधा के रुप में उसका अस्तित्व निर्धारित हुआ। पाश्चात्य जगत् के अनेक प्रसिद्ध नाट्कयकारों विशेष रुप से इब्सन, बर्नार्ड शॉ, गाल्सवर्दी तथा एन्टन चेखव आदि नाटककारों के प्रभाव ने हिन्दी एकांकी के शिल्प को भी प्रभावित किया। मैतरलिंक, बेरी, सिमोनोव, ओ'नील, प्रीस्टले, पिनरो, सिओनोव, आर्थर बैली, ओलीफैन्ट डाउन तथा जॉन ड्रिंकवाटर आदि की रचनाओं का अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत किया गया। इन अनुवादों के साथ-साथ हिन्दी में एकांकी के क्षेत्र में एक नया युग आरंभ हुआ। अनेक पाश्चात्य विचारधाराओं ने हिन्दी एकांकी के वैचारिक स्वरुप को भी प्रभावित किया।

(iv) नाट्य-रचना के क्षेत्र में यह युग विशेष रुप से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है। इस युग के एकांकीकारों ने सामाजिक, पारिवारिक, वैयक्तिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक विषयों पर एकांकी रचना की। यह युग नवीन जागरण का युग था। अब तक हिन्दी एकांकी प्रौढता ग्रहण कर चुकी थी। साहित्यिकता, कलात्मकता, जागरुकता, विषय क्षेत्र की विस्तृतता, नवीनता, बौद्धिकता आदि इस युग की एकांकी विशेषताएँ हैं। इस युग में जहाँ एक ओर परम्परागत विषयों और प्रवृत्तियो पर एकांकी रचनाएँ हुई वहाँ दूसरी ओर पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरुप अनेक नवीन विषयों का एकाकी साहित्य में समावेश हुआ और कई नई प्रवृत्तियाँ भी जन्मीं। इस युग की एकांकी-साहित्य की महत्ता इस दृष्टि से ऑकी जा सकती है कि यहीं से एकांकी मानवीय जीवन के निकट आयीं। एकांकीकारों ने उस समय की वाणी अपनी रचनाओं में मुखरित की है। अपनी संस्कारिता के कारण, सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से इस युग की विशेषता है - समाज में मध्यम वर्ग का आविर्भाव। नौकरी पेशा यह वर्ग अन्य दो वर्गो की तुलना में अनेक विशेषताओं और समस्याओं को लिए हुए है। इस वर्ग से जुडी तमाम जटिलताओं और मनोविश्लेषणात्मक जीवन-दर्शन से प्रभावित जीवन-सत्यों को विषयवस्तु के रुपों में प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। समकालीन परिस्थितियों से उद्भुत तत्कालीन एकांकियों मे प्रमुखतः कर्तव्य और प्रेम का संघर्ष, सद्गुणों और दुर्गुणों का संघर्ष, दो सस्कृतियो के बीच का संघर्ष, चरित्र-चित्रण में अन्तर्द्वन्द्व, सूक्ष्म मनःस्थितियों का निरुपण आदि विषयों को प्राथमिकता मिली। एकांकियों का मूल स्वर स्थूल से सूक्ष्म की ओर प्रवाहित दिखाई देता है। भय,आशंका, कुण्ठा, आक्रोश, असंतोष, परित्राण, मानसिक परिताप

और द्वन्द्व, दैनन्दिन संघर्ष आदि समस्याएँ तथा आम जीवन का बोधगम्य चित्रण इस युग की एकांकियों में निहित है। अतः तत्कालीन जीवन को प्रतिबिम्बित करने का कार्य उस युग की एकाकी-साहित्य ने बडी सतर्कता एवं यथार्थता से किया है और इस तरह से मानवीय जीवन के रोजमर्रा की अर्थात् दैनिक जीवन की समस्याओ का दिग्दर्शन हुए। अतः इस युग के एकांकीकारों ने संस्कृत के शास्त्रीय नियमों के निर्वाह का मोह छोडकर नवीन प्रयोगों के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है।

(v) शिल्प संबंधी जागरुकता और रंग प्रयोग की दृष्टि से प्रसाद युग का विशेष महत्व है। एकांकी की शिल्पविधि और रंगशिल्प में महत्वपूर्ण अभ्युदय हुआ। प्रसाद का एकाकी 'एक घूँट' एकांकी के रचनातंत्र की विकासावस्था को लक्षित करता है। बाद में भुवनेश्वर, रामकुमार वर्मा आदि एकांकीकार प्रारंभ से शिल्प और रंगसंबंधी चेतना को लेकर आये। रंगसंकेतों का सबसे सफल प्रतीकात्मक और कथात्मक प्रयोग भुवनेश्वर प्रसाद की अपनी विशेषता है। गणेश प्रसाद द्विवेदी पात्रों के चरित्र, उसके मनोविश्लेषण और तीव्र विकास पर विशेष ध्यान देते हैं। डॉ. वर्मा ने पात्रों के चित्रण में द्वन्द्व को विशेष महत्व दिया और एक ही दृश्य रखने एव अन्वितियों के निर्वाह करने की दृष्टि जैसी सर्वथा नवीन प्रवृत्तियाँ हिन्दी एकांकी को दीं। भुवनेश्वर और डॉ. रामकुमार वर्मा ने हिन्दी एकांकी को शिल्प की जो नवीनता प्रदान की उसको विकसित करने का श्रेय उपेन्द्रनाथ 'अश्क', उदयशंकर भट्ट और जगदीशचन्द्र माथुर ने किया। सेठजी ने 'उपक्रम' और 'उपसंहार' अवतारणा की जिसे उनकी मौलिक देन कहा जाता रहा है। एकपात्री नाटकों की रचना में भी उनका महत्वपूर्ण योग रहा है। काव्य एकांकी भी इस युग की महत्वपूर्ण देन मानी जा सकती है। एकांकी के विभिन्न तत्वों विशेष रुप से संवाद योजना तथा भाषा के क्षेत्र में इस युग के एकांकीकारों ने परिपक्वता का परिचय दिया। इन्हीं सभी कारणों से प्रसाद युग का एकांकी साहित्य अपने समय को प्रतिबिम्बित करने में समर्थ हुआ। प्रतीकों अथवा संकेतों के माध्यम से एकांकीकारों ने अपने उद्देश्य अधिक प्रभाविकता के साथ संप्रेषित किए हैं। इस प्रकार प्रतीकात्मक या संकेतात्मक शैली का प्रयोग अधिकाशतः एकांकीकारों ने अपनी रचनाओं में कुशलता एवं सजगता से किया है। 'एक घूँट', 'बादल की मृत्यु', 'देवताओं की छाया में', 'सूखी डाली', 'खिडकी', 'चरवाहे', 'चिलमन' आदि इसी शैली पर विनिर्मित एकांकी रचनाएँ हैं।

6) हिन्दी एकांकी के विकास का चतुर्थ सोपान अनेक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

यद्यपि इस युग की एकांकियों में वे सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं जो पूर्ववर्ती प्रसादयुग में प्रचलित और परिवर्द्धित हुई थी फिर भी कतिपय वैशिष्ट्य ऐसे हैं जो इस युग की महत्ता को प्रतिपादित करने के प्रमुख आधार हैं।

इस युग की एकांकियों की प्रथम विशेषता वस्तुगत कही जा सकती है। वैज्ञानिक आविष्कारों के बढते हुए प्रभाव से दुनिया सिमटती गई। पाश्चात्य साहित्य, संस्कृति एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रभाव से भारतीय समाज जीवन के प्रति अधिक यथार्थवादी होता गया। आध्यात्मिकता और धार्मिकता के बदले जन-मानस मे भौतिकता का आकर्षण बढा। दीर्घकालीन संघर्ष में जुडते हुए लोगों ने जिन सुनहरे भविष्य का सपना सॅजोया था वह वास्तविकता के ठोस जमीन से टकराकर चकनाचूर हो गया था। एकांकी-साहित्य में समकालीन परिस्थितियों के प्रभाव को स्पष्टतः देखा जा सकता है। उदासीनता, कुंठा, तार्किकता, यथार्थवादिता इस युग की एकांकियों की वस्तुगत विशेषता है।

इस युग की दूसरी विशेषता थी प्रयोगात्मकता। एकांकियों के क्षेत्र में भी अनेक नवीनतम प्रयोग होते रहे। ध्वनि-रुपकों या रेडियो-एकांकियों का प्रचलन इसका प्रमुख उदाहरण हैं। ध्वनि-रुपक या रेडियो एकांकी, एकांकी का एक नव विकसित रुप है जिसमें सारी विषयवस्तु का आयोजन एवं प्रस्तुतीकरण दृश्य के स्थान पर ध्वनि के माध्यम से होता रहा है। इस क्षेत्र में नव अवतरित साहित्यकारों में विष्णु प्रभाकर, प्रभाकर माचवे, चिरंजीत, गोपाल शर्मा, रेवतीसरन शर्मा, रामसरन शर्मा, प्रभृति उल्लेखनीय हैं। 'इंसान', 'बीमार', 'क्रांति', 'वधू चाहिए', 'अच्छे पडोसी', 'दोपहरी', 'दबी आग', 'उतार-चढ़ाव', 'फाग', 'कलंक' आदि इस युग की प्रमुख रेडियो एकांकी हैं। पद्यात्मक या काव्यात्मक एकांकी लिखने के भी अनेक सफल प्रयोग हुए हैं। गीति-एकांकियों की भी रचना की गई। 'पार्वती और सीता', 'नूरजहाँ', 'प्रथम छाया' इस वर्ग की उत्कृष्ट रचनाएँ हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् मुक्त-प्रेम, और मुक्त यौन संबंध, संत्रास, भय और मृत्यु पीडा, टूटते संबंध, बदलता संबंध, नवीन संबंध, अस्तित्व की रक्षा और जिजीविषा, यथार्थपरक दृष्टिकोण, प्राचीन नैतिकता का विरोध आदि तत्व एकांकी के विकसित स्वरुप के रुप में उभरे हैं। एकांकीकारों की दृष्टि समष्टि से व्यष्टि की ओर उन्मुख हुई। स्वतंत्रता प्राप्ति के अनन्तर हिन्दी एकांकी का विकास और भी द्रुतगति से हुआ क्योंकि एक तो परतंत्रता से मुक्ति के कारण नयी चेतना का जागरण होना स्वाभाविक था। यद्यपि इस युग में कुछ लेखक तो अपनी पुरानी परपरा का ही निर्वाह कर रहे हैं किन्तु कुछ नए लेखकों ने नाट्य-रचना की नयी दृष्टि, नयी वस्तु एवं नए शिल्प का भी प्रयोग करते हुए कतिपय नूतन परंपराओं का प्रवर्तन किया है। विषयवस्तु की दृष्टि से नए एकांकी साहित्य में ऐतिहासिक, पौराणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक,

राष्ट्रीय, देशभक्तिपूर्ण, यथार्थवादी, प्रगतिवादी आदि विषय मुख्यतः हैं।

इस युग के प्रमुख रचनाकारों में है - रामवृक्ष बेनीपूरी, शंभूदयाल सक्सेना, लक्ष्मीनारायण लाल, डॉ. सरनामसिंह 'अरुण', प्रो. अर्जुन चौबे काश्यप, विनोद रस्तोगी, जयनाथ नलिन, विष्णु प्रभाकर, धर्मवीर भारती, सत्येन्द्र शरत्, रावी, प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त आदि। इनकी प्रमुख रचनाओं में - 'सीताहरण', 'लक्ष्मण परित्याग', 'उर्वशी', 'भक्तराज नंद', 'सत्य का दण्ड', 'नंदिग्राम का तपस्वी', 'प्रह्लाद', 'पीली आँधी', 'तुलसीदास', 'नौकर', 'मानवी', 'बडे आदमी', 'वर निर्वाचन', 'प्रेरणा', 'नौआखली', 'स्वर्ग में गांधी', 'अग्नि परीक्षा', 'देव-दर्शन', 'प्रतिशोध', 'आवाज का नीलाम', 'होटल', 'पराजय के बाद' आदि प्रमुख हैं। इन एकांकीकारों ने यथार्थवादी बौद्धिकता को अपनी रचनाओं में प्राथमिकता प्रदान की। अतिशय भावनामयता और कल्पनाशीलता को कोई स्थान नहीं दिया। बौद्धिक दृष्टिकोण के द्वारा अतीत को तर्क की कसौटी पर परखा गया और वर्तमान को भी पूर्णतः सूक्ष्म दृष्टि से परखा गया। अतः पुराण और इतिहास से एकांकीकारों ने जो कथानक लिये हैं उन्में असंभव सी दिखनेवाली घटनाओं की बुद्धिपरक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं। इस दृष्टिकोण से एकांकियों में शैलिगत यह परिवर्तन आया कि संवाद की भाषा रोज की बोली जाने वाली बातचीत का रुप ले लेती है। साथ ही इनमें बौद्धिक व्याख्याएँ और मानसिक विश्लेषण को भी स्थान मिलने लगा। फलतः शैली वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक और इसके अतिरिक्त विश्लेषणात्मक हो गयी।

अतः हिन्दी का एकांकी-साहित्य आज पर्याप्त उन्नत दशा में है। विषयवस्तु की दृष्टि से यह अत्यत व्यापक, विचारों की दृष्टि से गंभीर एवं शैली की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण है। इनके माध्यम से जहाँ एक ओर भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं इतिहास-पुराण की नयी व्याख्या प्रस्तुत हुई है वहाँ दूसरी ओर आधुनिक जीवन के प्रायः सभी पक्षों एवं उनकी विभिन्न समस्याओं का अंकन इनमें हुआ है। एकांकी के प्रायः सभी प्रचलित भेदोपभेदों यथा-ध्वनिरुपक, संगीत रुपक, रेडियो प्रहसन या झलकी, मनोलॉग या स्वगत नाट्य आदि का विकास इस युग में दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार हिन्दी एकांकी का विकास अनेक रुपों और अनेक दिशाओं में हुआ है। अपने युग और समाज की नवीनतम स्थितियों, परिस्थितियों, संवेदनाओं और अनुभूतियों को व्यंजित करने की दृष्टि से हिन्दी एकांकी अन्य विधाओं की अपेक्षा सर्वाधिक नवीन एवं अधुनातन है जो इस क्षेत्र के लेखकों की व्यापक अन्तर्दृष्टि एवं गंभीर सामाजिक चेतना को प्रामाणित करता है।

संदर्भ सूचि

1.	जे डब्ल्यू मेरियट, 'वन एक्ट प्लेज ऑफ टूडे'		पृ 191
2.	डॉ दशरथ ओझा, 'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास'		पृ 447
3	डॉ रमेशचन्द्र शर्मा, 'विद्या साहित्यिक निबध'		पृ. 329
4.	डॉ भूवनेश्वर महतो, 'हिन्दी एकाकी का रंगमंचीय अनुशीलन'		पृ. 77
5	डॉ सिद्धनाथ कुमार, 'हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास'		पृ. 59
6	प्रो सद्गुरुशरण अवस्थी, 'नाटक और नायक'		पृ 9
7	वही	वही	पृ 10
8.	वही	वही	पृ. 11
9	डॉ रामचरण महेन्द्र,	'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास'	पृ. 23
10	सेठ गोविन्ददास,	'नाट्यकला मीमांसा'	पृ. 15
11	डॉ रामचरण महेन्द्र,	'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास'	पृ. 25
12	डॉ. सत्येन्द्र,	'हिन्दी एकांकी'	पृ 123
13.	डॉ रामकुमार वर्मा,	'पृथ्वीराज की ऑखें', भूमिका	
14.	डॉ. रामकुमार वर्मा,	'रेशमी टाई', भूमिका	पृ 7
15	डॉ रामकुमार वर्मा,	'रेशमी टाई', भूमिका	पृ. 7
16.	डॉ रामचरण महेन्द्र,	'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास'	पृ 26-27
17	डॉ उपेन्द्रनाथ 'अश्क',	'प्रतिनिधि एकांकी'	पृ 16
18.	डॉ. उपेन्द्रनाथ 'अश्क',	'प्रतिनिधि एकांकी'	पृ 17
19.	डॉ उपेन्द्रनाथ 'अश्क',	'प्रतिनिधि एकांकी'	पृ 21
20.	डॉ उपेन्द्रनाथ 'अश्क',	'प्रतिनिधि एकांकी'	पृ. 23
21	डॉ. रामकुमार वर्मा,	'रेशमी टाई' भूमिका	पृ 12
22	डॉ नगेन्द्र,	'आधुनिक हिन्दी नाटक'	पृ. 10
23.	डॉ सत्येन्द्र	'हिन्दी एकांकी'	पृ 136
24.	डॉ एस.पी खत्री,	'नाटक की परख'	पृ. 177
25	डॉ. दशरथ ओझा,	'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास'	पृ. 330
26	डॉ नगेन्द्र,	'आधुनिक हिन्दी नाटक'	पृ 321
27.	डॉ सिद्धनाथ कुमार	'हिन्दी एकाकी की शिल्पविधि का विकास'	पृ 32
28	जशवंत शेखडीवाला	'एकांकी, ज्ञानगंगोत्री' अंक-10	पृ. 119
29	डॉ रामचरण महेन्द्र,	'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास'	पृ. 31
30.	सं डॉ श्रीधर सिंह,	'एकांकी रत्नाकर'	पृ. 10
31.	A BERRIDALE,	"The Sanskrit Drama(Oxford University Press, 1924)	पृ. 267
32	F H O MARSAUL M.H BRO , "Invitation to the Theatre"		
33	Percival Wilde, "Construction of the One Act Play"		
34	आचार्य उपेश शास्त्री, 'हिन्दी गद्य-साहित्य का विकास क्रम'	पृ. 146	
	(MARJOURIS BOUIBAN, "The Anatomy of Drama" P. 175)		
35	Ibid		P 81

36. William Kozlenko, "The One Act Play to Daay ed " P. 19-20
37. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्भाव और विकास' पृ. 31
38 सं डॉ श्रीधर सिह, 'एकांकी रत्नाकर' पृ 10
39 Sydney Box, "The Technique of the One Act Play".
40 Sydney Box, "The Technique of the One Act Play". P 10
41. डॉ. रामकुमार वर्मा, 'रेशमी टाई' - भूमिका पृ. 7
42. डॉ. भूवनेश्वर मेहता, 'हिन्दी एकाकी का रगमंचीय अनुशीलन' पृ. 78
43. डॉ भूवनेश्वर मेहता, 'हिन्दी एकाकी का रंगमंचीय अनुशीलन' पृ. 78
44 गिरीश रस्तोगी, 'हिन्दी एकांकी की विकास यात्रा' : खण्ड-एक, सम्पादक : प्रभाकर श्रोत्रिय पृ 561
45 कीथ कृत, 'द सस्कृत ड्रामा'
46. डॉ. दशरथ ओझा, 'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास' पृ. 448
47 गिरीश रस्तोगी, 'हिन्दी एकांकी की विकास यात्रा': खण्ड-एक, सम्पादक : प्रभाकर श्रोत्रिय पृ. 562
48. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास'- भूमिका
49. डॉ दशरथ ओझा, 'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास' पृ
50. डॉ दशरथ ओझा, 'जन-नाट्य के संस्कार', प्रसारिका-1 से 3 पृ. 70
51. श्री सत्यनारायण अग्रवाल कृत 'रासलीलाएँ' हिमालय वर्ष 2 अंक-1 पृ. 671
52. डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास' पृ. 18
53. वही वही पृ. 12
54. डॉ एस पी खत्री, 'नाटक की परख', प्रथम संस्करण पृ 177
55. डॉ नगेन्द्र, 'आधुनिक हिन्दी नाटक' (एकाकी की भूमिका) पृ 125-127
56. पृथ्वीराज कपूर, 'अभिनन्दन ग्रन्थ', डॉ रामचरण महेन्द्र पृ 129
57 प्रो अमरनाथ गुप्त, 'तपस्विनी' पृ 1
58. प्रो प्रकाशचन्द गुप्त, 'भारतीय परपरा के मूल तत्व', जु.-1954 पृ 18
59 डॉ प्रेमनारायण शुक्ल, 'भारतेन्दु की नाट्यकला' पृ 41
60. सेठ गोविन्ददास, 'अभिनन्दन ग्रथ' - सं डॉ. नगेन्द्र -
'भारतीय नाट्य साहित्य हिन्दी मे एकांकी का स्वरुप लेख' पृ 99
61 डॉ दशरथ ओझा, 'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास' पृ. 455
62. गिरीश रस्तोगी, 'हिन्दी एकाकी की विकास यात्रा', सं. प्रभाकर श्रोत्रिय, खण्ड-1 पृ 562
63. पृथ्वीराज कपूर 'अभिनन्दन ग्रंथ', डॉ रामचरण महेन्द्र पृ 129
64. 'हिन्दी नाटक पर एक विहगम दृष्टि' पृ. 92
65. डॉ सिद्धनाथ कुमार, 'हिन्दी एकाकी की शिल्पविधि का विकास' पृ 154
66. पं रामबिहारी मिश्र और पडित देवबिहारी मिश्र, 'हिन्दी काव्य', 'सरस्वती' भाग-1
सख्या-18 सितंबर-1900
67 स प्रभाकर श्रोत्रिय - 'श्रेष्ठ भारतीय एकांकी', 'हिन्दी एकांकी की विकास यात्रा', खण्ड-1 पृ 564
68 डॉ सरोजिनी अग्रवाल, 'द्विवेदी युगीन खण्ड काव्य' पृ 21
69 डॉ उदयभानु सिह, 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग' पृ 265
70. स डॉ नगेन्द्र, 'भारतीय नाट्य साहित्य : सेठ गोविन्ददास अभिनन्दन ग्रथ'
(डॉ भोला नाथ का लेख : 'हिन्दी एकांकी का विकास') पृ 378
71. डॉ श्रीमती अजु लता गौड, 'हिन्दी एकांकी मे जीवन-मूल्य' पृ 118

72 डॉ. जयशंकर प्रसाद, 'विशाख' नाटक की भूमिका, प्रथम संस्करण
73. डॉ भानुदेव शुक्ल, 'प्रसाद का नाट्य साहित्य' पृ. 94
74. जय शकर प्रसाद, 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध' पृ. 28
75. श्रीमती अंजु लता गौड, 'हिन्दी एकांकी मे जीवन मूल्य' पृ 144
76. राजेन्द्रसिंह गौड कृत - 'आधुनिक कवियो की काव्य साधना' पृ. 24
77. प्रो प्रकाशचन्द्र गुप्त, 'हंस', सन् 1938 ई एकांकी का विशेषांक
78 डॉ. सत्येन्द्र, 'हिन्दी एकांकी' - साहित्य रत्न भंडार आगरा पृ 29
79 डॉ. दशरथ ओझा, 'हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास' पृ. 447
80 डॉ नगेन्द्र, 'आधुनिक हिन्दी नाटक' पृ 131
81. डॉ सत्येन्द्र, 'हिन्दी एकांकी' पृ 28
82. डॉ. श्रीमती अंजु लता गौड, 'हिन्दी एकाकी मे जीवन मूल्य' पृ 154
83. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, 'प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन' पृ 210
84. डॉ विश्वनाथ प्रसाद शर्मा, 'हिन्दी नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव' पृ. 250
85. डॉ. गीतारानी पालीवाल, 'रंगमच और जयशंकर प्रसाद के नाटक' पृ 123
86. डॉ भूवनेश्वर महतो, 'हिन्दी एकाकी का रंगमंचीय अनुशीलन' पृ 180
87. डॉ. सत्येन्द्र, 'एकांकी कला' पृ 56
88 डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास' पृ 156
89. डॉ सत्येन्द्र, 'साहित्य संदेश', भाग-1 पृ. 22
90. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास' पृ 159
91. सं. कौशल्या 'अश्क', 'नाटककार अश्क' पृ 41
92. डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास' पृ. 184
93. वही वही पृ 185
94. प्रो. जयनाथ नलिन कृत, 'हिन्दी नाटककार' पृ 178
95. डॉ. नगेन्द्र, 'पर्दे के पीछे', भूमिका पृ. 7
96. डॉ. नगेन्द्र, 'आधुनिक हिन्दी नाटक' पृ. 68
97. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास' पृ 159
98 वही वही पृ. 193
99. वही वही पृ 216
100. डॉ. श्रीमती अंजु लता गौड, 'हिन्दी एकांकी में जीवन मूल्य' पृ 244
101. श्री सद्गुरु शरण अवस्थी, 'नया पथ- नाटक विशेषाक'
वर्ष-3, अंक-7, मई 1956 के लेख-नाटक स्वरुप
102. प्रो. सत्येन्द्र, 'हिन्दी एकांकी' पृ. 30
103. डॉ. नगेन्द्र, 'पर्दे के पीछे', भूमिका पृ 7
104 डॉ सत्येन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का आरभ और विकास' पृ 31
105 डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्भव और विकास' पृ 217
106 प्रो सद्गुरु शरण अवस्थी, 'नाटक और नायक' पृ 11
107 डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्भव और विकास' पृ 252
108. वही वही पृ. 254
109. वही वही पृ 254

110. श्री चन्द्रकिशोर जैन, 'एकांकिका', द्वार पूजा पृ. घ।
111. श्री कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, 'एकांकिनी की भूमिका'
112. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्‌भव और विकास' पृ 248
113 वही वही पृ. 248
114. वही वही पृ. 243
115. प्रेम नारायण टण्डन, 'प्रेरणा', निवेदन पृ 4
116. डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्‌भव और विकास' पृ. 258
117. प्रो. रामचन्द्र तिवारी, 'हिन्दी वाङ्मय', जनवरी-1954
118. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्‌भव और विकास' पृ 280
119 वही वही पृ 267
120 वही वही पृ 301
121 वही वही पृ. 302
122. वही वही पृ. 267
123. 'वीणा', अप्रैल-1946, सम्पादकीय पृ 262
124. डॉ. रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकाकी का उद्‌भव और विकास' पृ. 134
125 वही वही पृ 136
126. प्रो वासुदेव नंदन प्रसाद, 'नया युग'-भूमिका पृ. 4
127. प्रो काश्यप : 'कविप्रिया', भूमिका पृ 3
128. श्री आनन्दीलाल तिवारी, 'कविप्रिया' पृ. 4
129 श्री विशम्भर उपाध्याय, 'साहित्य संदेश', भाग-15, अक-12 पृ 513
130. गणपतिचन्द्र भण्डारी, 'सतरंगिनी', भूमिका पृ. 3
131. डॉ रामचरण महेन्द्र, 'हिन्दी एकांकी का उद्‌भव और विकास' पृ 266